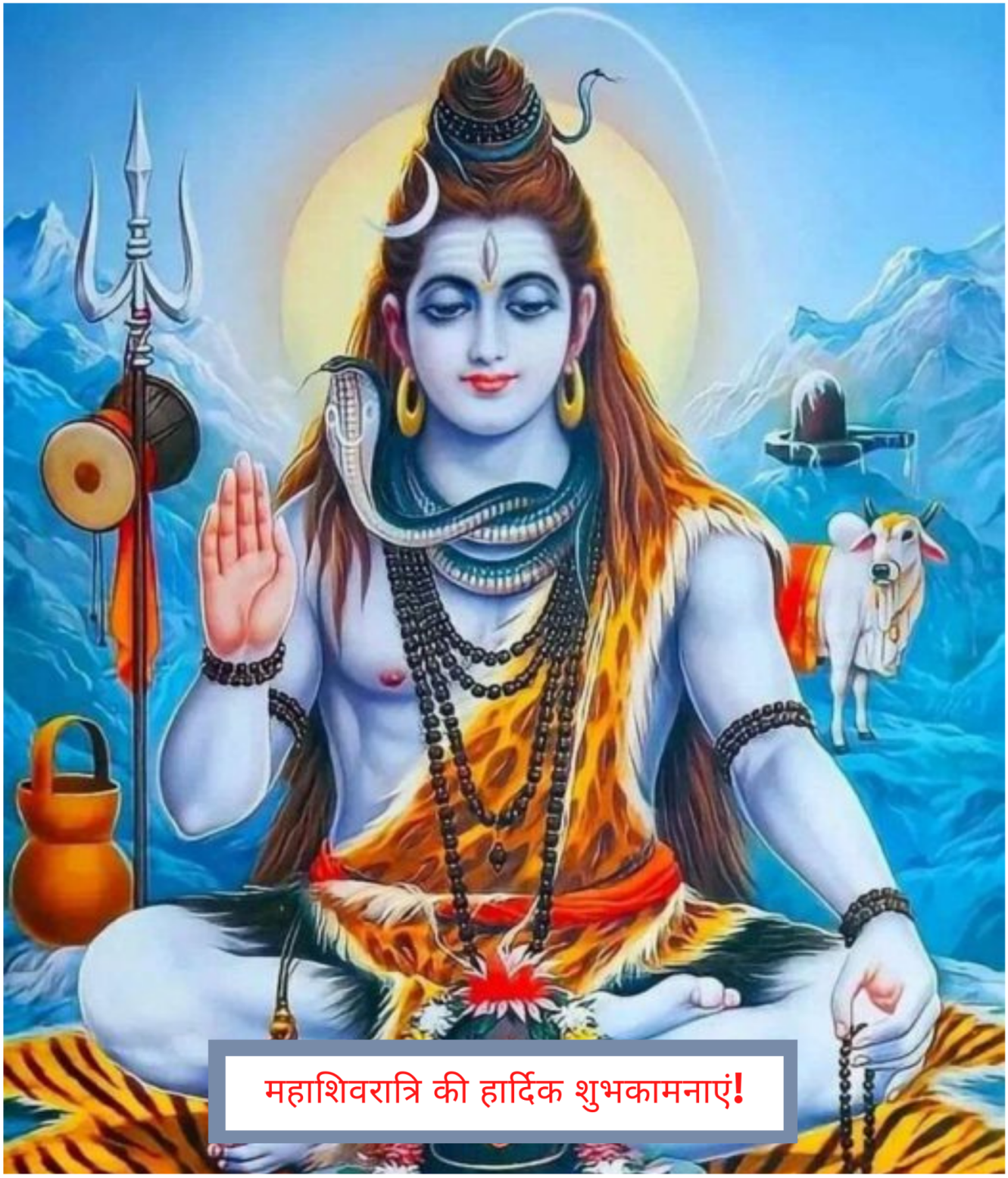
वर्ष: 17 | अंक : 2 | फरवरी 2026 | मूल्य: ₹ 10 /=

हंसलोक संदेश



भारतीय संस्कृति, अध्यात्म व सामाजिक एकता की प्रतीक हिंदी मासिक पत्रिका



हंसलोक संदेश

भारतीय संस्कृति, आध्यात्मिक ज्ञान व सामाजिक एकता की प्रतीक

वर्ष-17, अंक-2
फरवरी, 2026
माघ-फाल्गुन, 2082 वि.स.
प्रकाशन की तारीख
प्रत्येक माह की 5 व 6 तारीख

मुद्रक एवं प्रकाशक-
श्री हंसलोक जनकल्याण समिति (रजि.)
श्री हंसलोक आश्रम, बी-18, (खसरा नं. 947),
छतरपुर-भाटी माइंस रोड, भाटी, महरौली,
नई दिल्ली-110074 के लिए मंगल द्वारा
एमिनेंट ऑफसेट, डी-94, ओखला इण्डस्ट्रियल
एरिया, फेस-।, नई दिल्ली-110020
से मुद्रित करवाकर प्रकाशित किया।

सम्पादक- राकेश सिंह
मूल्य-एक प्रति-रु.10/-
पत्राचार व पत्रिका मंगाने का पता:
कार्यालय: हंसलोक संदेश
श्री हंसलोक जनकल्याण समिति,
B-18, भाटी माइंस रोड, भाटी,
छतरपुर, नई दिल्ली-110074
मो. नं. : 8800291788, 8800291288
Email: hansloksandesh@gmail.com
Website: www.hanslok.org

Subject to Delhi Jurisdiction
RNI No. DELHIN/2010/32010

संपादकीय

शिव हैं सत्य की शाश्वत यात्रा

शिव साधना हैं, ध्यान हैं, ध्येय हैं और योग भी हैं। साथ ही, इससे परे भी हैं। शिव को समझने का अर्थ है खुद का रूपांतरण। शिव हमारे अंदर बैठे हैं। बस सुरति को मोड़कर अंतर्यात्रा पर जाना होगा। शिव वर्तमान हैं, उनको पाने के लिए बस स्वयं को पलटना है। शरीर के बदले मन एवं बुद्धि को उघाड़ना है। जो शरीर पर सिमट कर रह गया, वह शिव को प्राप्त नहीं कर सकेगा। योगी शिव भौतिक से आत्मिक यात्रा का संदेश देते हैं। शरीर, मन और बुद्धि से आत्मा की यात्रा हैं शिव। खुद को सहज, सरल और शुद्ध करना ही शिवत्व है। भगवान शिव ने माता पार्वती को जो उपदेश दिया है, वह व्यक्ति को सत्य का साक्षात्कार कराता है। जहाँ भी सत्य है, वहीं शिव का वास है। शिव के साथ सारी विषमताएं हैं। वे औघड़ हैं, आशुतोष हैं, गृहस्थ हैं, महायोगी हैं, त्यागी और तपस्वी हैं, पिता हैं, गुरु हैं, मृत्यु हैं, जीवन हैं। भारतीय होने का अर्थ है शिव को जानना। उनको जाने बिना इस लोक को जानना असंभव है। उनकी आराधना से मोक्ष मिलता है। वे ज्ञान का वेद हैं, वे रामायण के प्रणेता हैं, संगीत के स्वर हैं, ध्यान के उत्स हैं। उनमें नृत्य वास करता है, जीवन को गति मिलती है। वे प्रेमी हैं, ऋषियों के गुरु हैं, देवताओं के रक्षक हैं, असुरों के सहायक हैं और मानवों के आदर्श हैं।

सभ्यता के उषा काल में शिव और पार्वती विज्ञान के धरातल पर काल चिंतन करते हैं। ज्ञान के शिखर पर बैठकर संतुलन एवं सत्य के विविध रूपों को खोजना कोई महायोगी और योगिनी ही कर सकते हैं। शिव जो भी बोलते हैं, वह जीवन के सूत्र हैं। शिव के हृदय में संसार नहीं है, वासना नहीं है और अंधेरा भी नहीं है; उनका जीवन ही प्रकाश है। जब प्रकाश होगा, तो सदैव ही प्रेम, करुणा, साधना एवं भक्ति रहेगी। अंतस के जागरण के लिए शिव-तत्व की जरूरत है। अंतस एक बार चैतन्य हो गया, तो सब कुछ बदल जाता है। आचरण ही साधना बन जाती है। हरेक शब्द प्रेमपूर्ण एवं कर्म के प्रत्येक चरण करुणापूर्ण हो जाते हैं। साधुता ही स्वभाव बन जाता है। भीतर जब आलोकित हो, तो बाहर सदैव ही प्रकाश रहेगा। शिवरात्रि का पर्व व्यक्ति को शिव की तरह ज्ञानवान और प्रकाशवान बनने का संदेश देता है। यह वह महापर्व है, जहाँ शिव और शक्ति, दो से एक हो जाते हैं; यह शिव और पार्वती के महामिलन का पर्व है। शिव पार्वती को द्वैत से अद्वैत का बोध कराते हैं अर्थात जिसका जीवन द्वैत से एकत्व को प्राप्त हो गया, उसी के जीवन में महाशिव रात्रि का उत्सव फलित हो गया जानो! ■

महाशिवरात्रि पर्व है शिव और शक्ति मिलन का उत्सव

महाशिवरात्रि का त्योहार भारत के आध्यात्मिक उत्सवों की सूची में सबसे महत्वपूर्ण है। किसी समय, भारतीय संस्कृति में एक वर्ष में 365 त्योहार हुआ करते थे। दूसरे शब्दों में कहें तो वे साल के प्रति दिन, कोई न कोई उत्सव मनाने का बहाना खोजते थे। ये 365 त्योहार विविध कारणों तथा जीवन के विविध उद्देश्यों से जुड़े होते थे। इन्हें विविध ऐतिहासिक घटनाओं, विजयश्री तथा जीवन की कुछ अवस्थाओं जैसे फसल की बुआई, रोपाई और कटाई आदि से जोड़ा गया था। हर अवस्था और हर परिस्थिति के लिए हमारे पास एक त्योहार था; परंतु महाशिवरात्रि का महत्व सबसे अलग है। हर चंद्र मास का चौदहवाँ दिन अथवा अमावस्या से पूर्व का एक दिन शिवरात्रि के नाम से जाना जाता है। सभी शिवरात्रियों में से, महाशिवरात्रि को सर्वाधिक महत्वपूर्ण माना जाता है। इस रात, ग्रह का उत्तरी गोलार्द्ध इस प्रकार अवस्थित होता है कि मनुष्य के भीतर की ऊर्जा प्राकृतिक रूप से ऊपर की ओर जाती है। यह एक ऐसा दिन है, जब प्रकृति मनुष्य को उसके आध्यात्मिक शिखर तक जाने में मदद करती है। इस समय का उपयोग करने के लिए हम एक उत्सव मनाते हैं, जो पूरी रात चलता है। पूरी रात मनाए जाने वाले इस उत्सव में इस बात का विशेष ध्यान रखा जाता है कि ऊर्जाओं के प्राकृतिक प्रवाह को उमड़ने का पूरा अवसर मिले, आप अपनी रीढ़ की हड्डी को सीधा रखते हुए, निरंतर जागते रहते हैं।



महाशिवरात्रि आध्यात्मिक पथ पर चलने वाले साधकों के लिए बहुत महत्व रखती है। यह उनके लिए भी बहुत महत्वपूर्ण है जो पारिवारिक परिस्थितियों में हैं और संसार की महत्वाकांक्षाओं में मग्न हैं। पारिवारिक परिस्थितियों में मग्न लोग महाशिवरात्रि को शिव के विवाह के उत्सव की तरह मनाते हैं। सांसारिक महत्वाकांक्षाओं में मग्न लोग महाशिवरात्रि को शिव के द्वारा अपने शत्रुओं पर विजय पाने के दिवस के रूप में मनाते हैं; परंतु साधकों के लिए यह वह दिन है, जिस दिन वे कैलाश पर्वत के साथ एकात्म हो गए थे। वे एक पर्वत की भाँति स्थिर व निश्चल हो गए थे। यौगिक परंपरा में शिव को किसी देवता की तरह नहीं पूजा जाता, बल्कि उन्हें आदि गुरु माना जाता है, जिनसे ज्ञान उपजा। ध्यान की अनेक सहस्राब्दियों के पश्चात एक दिन वे पूर्ण रूप से स्थिर हो गए। वही दिन महाशिवरात्रि का था। उनके भीतर की सारी गतिविधियाँ शांत हुईं और वे पूरी तरह से स्थिर हुए, इसलिए साधक महाशिवरात्रि को स्थिरता की रात्रि के रूप में मनाते हैं। इसके पीछे की कथाओं को छोड़ दें, तो यौगिक परंपराओं में इस दिन का विशेष महत्व इसलिए भी है, क्योंकि इसमें आध्यात्मिक साधक के लिए बहुत-सी संभावनाएँ मौजूद होती हैं। आधुनिक विज्ञान अनेक चरणों से

होते हुए, आज उस बिंदु पर आ गया है, जहाँ उन्होंने आपको प्रमाण दे दिया है कि आप जिसे भी जीवन के रूप में जानते हैं, पदार्थ और अस्तित्व के रूप में जानते हैं, जिसे आप ब्रह्माण्ड और तारामंडल के रूप में जानते हैं, वह सब केवल एक ऊर्जा है, जो स्वयं को लाखों-करोड़ों रूपों में प्रकट करती है। यह वैज्ञानिक तथ्य प्रत्येक योगी के लिए एक अनुभव से उपजा सत्य है। **'योगी'** शब्द से तात्पर्य उस व्यक्ति से है, जिसने अस्तित्व की एकात्मकता को जान लिया है। इस असीम विस्तार को तथा अस्तित्व में एकात्म भाव को जानने की सारी प्रक्रिया योग है। महाशिवरात्रि की रात व्यक्ति को इसी का अनुभव पाने का अवसर देती है।

शिवरात्रि माह का सबसे अंधकारपूर्ण दिवस होता है। प्रत्येक माह शिवरात्रि का उत्सव तथा महाशिवरात्रि का उत्सव मनाना ऐसा लगता है, मानो हम अंधकार का उत्सव मना रहे हों। कोई भी तर्कशील मन अंधकार को नकारते हुए प्रकाश को सहज भाव से चुनना चाहेगा; परंतु शिव का शाब्दिक अर्थ ही यह है, जो नहीं है। जो है वह अस्तित्व और सृजन है। जो नहीं है, वह शिव है। जो नहीं है, उसका अर्थ है, अगर आप अपनी आँखें खोल कर आसपास देखें और आपके पास सूक्ष्म दृष्टि है, तो आप बहुत सारी रचना देख सकेंगे। अगर आपकी दृष्टि केवल विशाल वस्तुओं पर जाती है, तो आप देखेंगे कि विशालतम शून्य ही अस्तित्व की सबसे बड़ी उपस्थिति है। कुछ ऐसे बिंदु, जिन्हें हम आकाशगंगा कहते हैं, वे तो दिखाई देते हैं, परंतु उन्हें थामे रहने वाली विशाल शून्यता सभी लोगों को दिखाई नहीं देती। इस विस्तार, इस असीम रिक्तता को ही शिव कहा जाता है। वर्तमान में आधुनिक विज्ञान ने भी साबित कर दिया है कि सब कुछ शून्य से ही उपजा है और शून्य में ही विलीन हो जाता है। इसी संदर्भ में शिव यानी विशाल रिक्तता या शून्यता को ही महादेव के रूप में जाना जाता है। इस ग्रह के प्रत्येक धर्म व संस्कृति में सदा दिव्यता की सर्वव्यापी प्रकृति की बात की जाती रही है। यदि हम इसे देखें, तो ऐसी एकमात्र चीज जो सही मायनों में सर्वव्यापी हो सकती है, ऐसी वस्तु जो हर स्थान पर उपस्थित हो सकती है, वह केवल अंधकार, शून्यता या रिक्तता ही है। सामान्यत: जब लोग अपना कल्याण चाहते हैं, तो हम उस दिव्य को प्रकाश के रूप में दर्शाते हैं। जब लोग अपने कल्याण से ऊपर उठ कर, अपने जीवन से परे जाने पर, विलीन होने पर ध्यान देते हैं और उनकी उपासना और साधना का उद्देश्य विलयन ही हो, तो हम सदा उनके लिए दिव्यता को अंधकार के रूप में परिभाषित करते हैं।

प्रकाश आपके मन की एक छोटी-सी घटना है। प्रकाश शाश्वत नहीं है, यह सदा से एक सीमित संभावना है, क्योंकि यह घट कर समाप्त हो जाती है। हम जानते हैं कि इस ग्रह पर सूर्य प्रकाश का सबसे बड़ा स्रोत है। यहाँ तक कि आप हाथ से इसके प्रकाश को रोक कर भी अंधेरे की परछाईं बना सकते हैं; परंतु अंधकार सर्वव्यापी है, यह हर जगह उपस्थित है। संसार के अपरिपक्व मस्तिष्कों ने सदा अंधकार को एक शैतान के रूप में चित्रित किया है, पर जब आप दिव्य शक्ति को सर्वव्यापी कहते हैं, तो आप स्पष्ट रूप से इसे अंधकार कह रहे होते हैं, क्योंकि सिर्फ अंधकार सर्वव्यापी है। यह हर ओर है। इसे किसी के भी सहारे की आवश्यकता नहीं है। प्रकाश सदा किसी ऐसे स्रोत से आता है, जो स्वयं को जला रहा हो। इसका एक आरंभ व अंत होता है। यह सदा सीमित स्रोत से आता है। अंधकार का कोई स्रोत नहीं है। यह अपने आप में एक स्रोत है। यह सर्वत्र उपस्थित है; तो जब हम शिव कहते हैं, तब हमारा संकेत अस्तित्व की उस असीम रिक्तता की ओर होता है। इसी रिक्तता की गोद में सारा सृजन घटता है। रिक्तता की इसी गोद को हम शिव कहते हैं। भारतीय संस्कृति में सारी प्राचीन प्रार्थनाएँ केवल आपको बचाने या आपकी बेहतरी के संदर्भ में नहीं थीं। सारी प्राचीन प्रार्थनाएँ कहती हैं, हे ईश्वर, मुझे नष्ट कर दो, ताकि मैं आपके समान हो जाऊँ। तो जिसे हम शिवरात्रि कहते हैं, जो माह का सबसे अंधकारपूर्ण दिन है, तो वह एक ऐसा अवसर होता है कि व्यक्ति अपनी सीमितता को विसर्जित करके सृजन के उस असीम स्रोत का अनुभव करे, जो प्रत्येक मनुष्य में बीज रूप में उपस्थित है।

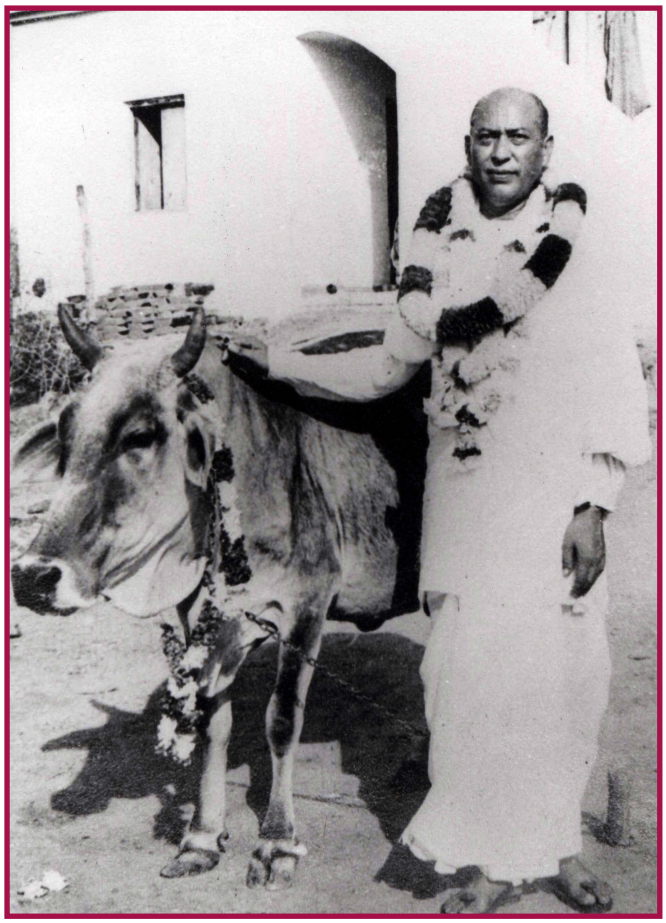
महाशिवरात्रि एक अवसर और संभावना है, जब आप स्वयं को हर मनुष्य के भीतर बसी असीम रिक्तता के अनुभव से जोड़ सकते हैं, जो सारे सृजन का स्रोत है। शिव एक ओर संहारक कहलाते हैं और दूसरी ओर वे सबसे अधिक करुणामयी भी हैं। वे बहुत ही उदार दाता हैं। यौगिक गाथाओं में वे अनेक स्थानों पर महाकरुणामयी के रूप में सामने आते हैं। उनकी करुणा के रूप विलक्षण और अद्‌भुत रहे हैं। इस प्रकार महाशिवरात्रि कुछ ग्रहण करने के लिए भी एक विशेष रात्रि है। इस रात में कम से कम एक क्षण के लिए उस असीम विस्तार का अनुभव करें, जिसे शिव कहते हैं। यह केवल नींद से जागते रहने की एक रात भर न रह जाए, यह सबके लिए जागरण की रात्रि होनी चाहिए, तभी महाशिव रात्रि पर्व मनाना सार्थक होगा। ■

हाथ में आया रतन, लेकिन कदर जानी नहीं

-योगिराज श्री हंस जी महाराज

अलीगढ़ रामलीला मैदान में सत्संग

योगिराज श्री हंस जी महाराज का अलीगढ़ के प्रेमीभक्तों के साथ अत्यधिक लगाव था। प्रेमीभक्तों के बुलावे पर वे अक्सर वहां जाते रहते थे। कई बार उन्होंने अलीगढ़ की नुमाइश में भी सत्संग किया। श्री महाराज जी सहज भाव से प्रेमीभक्तों के साथ अलीगढ़ नुमाइश में घूम-घूमकर आनंद देते थे। यह उनके सत्संग और दर्शन का ही प्रभाव था कि अनेक प्रभावशाली लोग श्री महाराज जी के शिष्य और भक्त बने। कई ने तो घर-गृहस्थी छोड़कर संन्यास ग्रहण कर अपना संपूर्ण जीवन अध्यात्म ज्ञान के प्रचार में समर्पित कर दिया। यह क्षेत्र ब्रज इलाके में होने की वजह से यहां के लोग बड़े ही रसिक भाव के होते हैं। भगवत चर्चा, कीर्तन और गीत गाने व सुनने का यहां बहुत ही प्रचलन है। गायन और नृत्य यहां के वातावरण में व्याप्त है। जब श्री हंस जी महाराज का सत्संग होता था तो प्रेमीभक्त उन्हें भगवान श्रीकृष्ण की तरह ही भांति-भांति के उपाय कर रिझाते थे। श्री महाराज जी भी सब कुछ भूलकर उनके साथ हास-परिहास करने लगते थे। तब तो ऐसा लगता था कि श्रीकृष्ण और गोपी-ग्वाल प्रत्यक्ष रासलीला कर रहे हों। प्रेमीभक्त श्री महाराज जी को मुकुट पहनाते, पीताम्बर पहनाते, उनके हाथ में बंसरी थमाते और श्री महाराज जी भी उनकी हर एक इच्छा पूर्ण करते थे। वे मुकुट व पीताम्बर धारण कर मुरली पकड़ श्रीकृष्ण की भांति ही तिरछे खड़े हो जाते थे। प्रेमीभक्तों का उनके प्रति ऐसा प्रेम और भाव था कि वे उनमें साक्षात श्रीकृष्ण के ही दर्शन करते थे। जब सब मिलकर भाव विभोर होकर ब्रज रस से परिपूर्ण भजन और रसिया गाते-नाचते तो श्री महाराज जी भी थिरकने लगते थे। ऐसा अद्भुत दिव्य वातावरण बनता था कि सभी सुध-बुध भूल जाते थे। इस तरह समय-समय पर श्री महाराज जी अलीगढ़ पधारते थे और प्रेमीभक्तों को अपनी दिव्य लीलाओं, सत्संग, दर्शन और सानिध्य से आनन्दित करते थे।



एक बार 27 व 28 अक्तूबर, सन् 1960 को श्री हंस जी महाराज का द्वि-दिवसीय कार्यक्रम रामलीला मैदान, अलीगढ़ में हुआ। यह एक बड़ा ही विशाल कार्यक्रम था और वहां के प्रेमीभक्तों ने बढ़-चढ़कर इसका प्रचार-प्रसार किया। रामलीला मैदान में भारी संख्या में एकत्रित श्रद्धालुओं को सम्बोधित करते हुए श्री महाराज जी ने कहा कि अभी तुम लोगों ने भजन सुना-

हाथ में आया रतन, लेकिन कदर जानी नहीं।

रत्न क्या है? रत्नों में कोहनूर हीरे का नाम आपने सुना होगा। इस समय संसार में उसको सबसे ज्यादा कीमती माना जाता है। अंग्रेज लोग उसे भारतवर्ष से ले गए थे। उन्होंने उसके दो टुकड़े करके एक महारानी के और दूसरा बादशाह के मुकुट में लगाया है; परंतु वह हीरा खाने-पीने

की चीज नहीं है। केवल रात्रि में चमक देने वाला एक पत्थर है। न उससे भूख-प्यास दूर होती है और न ही उससे शरीर का कोई रोग दूर होता है। उल्टा उसकी रक्षा के लिए हजारों मनुष्यों को पहरे पर रखना पड़ता है। दिन-रात उसी का ख्याल रखना पड़ता है, इतना कुछ होने पर भी कितने राजा और रानी उसको अपना-अपना कहकर अंत में छोड़कर चले गए। वह हीरे-मोती अब उनके किस काम के? वास्तव में यह मनुष्य तन ही अनमोल रत्न है, यही पारस है, इससे चाहे जितना सोना बना सकते हो। इसी शरीर को पाकर हीरे-मोती जमा किए जाते हैं।

अंग्रेजों के शासन काल में उनके घोड़ों की देखरेख करने वाले लोगों को सईस कहा करते थे, वे घोड़ों की हर प्रकार से देखभाल करते थे। हमसे अच्छे तो इनके कुत्ते और घोड़े हैं, जिनको अच्छा खाना, कपड़ा और नौकर-चाकर मिले हुए हैं। क्या वे इस शरीर की कीमत को जानते थे? नहीं, वे इसकी कीमत नहीं जानते थे। अच्छा कपड़ा तो हाथी को भी मिलता है, उसका भी श्रृंगार किया जाता है, पर हाथी को उससे क्या लाभ? मनुष्य शरीर ही सब शरीरों में उत्तम माना गया है। जितने अवतार, ऋषि, मुनि, संत, महात्मा, भक्त हुए हैं, इसी शरीर में हुए हैं। भगवान राम इसी मनुष्य शरीर के लिए हाथ जोड़कर हम सबको कहते हैं, हमें उनके उपदेश की ओर ध्यान देकर विचार करना चाहिए; जिसके लिए वे हमारे आगे हाथ जोड़ते हैं, वह बात जरूर रहस्यमय होगी। हलुवा, पूरी, खीर कोई भी देवी-देवता बना नहीं सकता, केवल खा सकता है और देवता तो खा भी नहीं सकते, चाहे उनके आगे तोलकर रख कर परीक्षा करके देख लो, परंतु अफसोस है कि जिस मनुष्य तन के पाने के लिए देवता तरसते हैं, हम अज्ञान में धन, स्त्री और पुत्रों को पाने के लिए उनकी तुच्छ सेवा में गंवा रहे हैं; मनुष्य शरीर साधन करके मोक्ष पाने के लिए है, जिसने इसे पाकर परलोक नहीं संवारा, वह अभागा आत्म-हत्यारे की गति को प्राप्त होता है।

हम सब अनेक योनियों में भोगों को ही भोगते आए हैं, परंतु यह योनि तो भगवान की भक्ति, उपासना और भजन करने के लिए है। यदि अब हमें किसी भी प्रकार भोग न भी मिले, तो चौरासी में ये सब भोग स्वतंत्रता से मिल जाएंगे; परंतु चौरासी में भगवान का सच्चा नाम जपने को नहीं मिलेगा। इसीलिए कहा है-**"हाथ में आया रतन, लेकिन कदर जानी नहीं"** अब इस मनुष्य शरीर में ही भगवान का नाम जान सकते हो और स्मरण कर सकते हो।

जब श्रृंगी ऋषि के पुत्र ने पिता के गले में सर्प डालने के अपराध में राजा परीक्षित को श्राप दिया कि आज से सातवें दिन यही सर्प राजा को काटेगा, तो राजा परीक्षित सब राज-कुटुम्ब और मित्रों को त्याग कर गंगा के किनारे पहुँच गए। वहां पर अट्ठासी हजार ऋषि-मुनि शुकदेव जी का सत्संग सुनने के लिए पहुँचे। राजा ने शुकदेव मुनि से पूछा- महाराज! मौत आने में केवल सात दिन बाकी हैं, इतने समय में ही मुझे वह उपाय बताओ, जिससे मेरा कल्याण हो जावे अर्थात मेरा मनुष्य तन पाना सार्थक हो। शुकदेव जी कहने लगे- हे राजन! कल्याण के लिए तो सात दिन का समय बहुत है। यदि कोई आखिरी सांस में भी भगवान के नाम का स्मरण करता हुआ शरीर त्यागता है, तो वह जन्म-मरण के बंधन से मुक्त हो जाता है। राजा ने तो मौत से बचने के लिए अपने जीवन के सात दिनों के अमूल्य समय को भगवान के चिंतन, भजन और भगवद्-चर्चा सुनने में लगाया; परंतु हमको भी तो सात दिनों रविवार, सोम, मंगल, बुध, वृहस्पति, शुक्र और शनि के अंदर ही मौत रूपी सर्प ने काटना है और हमें मर जाना है। इसलिए तुम भी संसार की ओर से विमुख होकर अपने जीवन को भगवान की भक्ति और भजन में ही लगाओ।

"गुरु बिन कौन बचाए, यम ने बांह पकड़ी"- काल से जीव को केवल गुरु ही बचा सकता है। आज तक गुरु के बिना संसार में किसी को भी ज्ञान नहीं हुआ। श्री गुरु महाराज जी जीव को पापों से छुड़ा सकते हैं। इसीलिए गोस्वामी तुलसीदास जी कहते हैं-

गुरु बिन भवनिधि तरइ न कोई। जो बिरंचि संकर सम होई।

गुरु के बिना हमारा कल्याण तथा हमें परमात्मा या आत्मा का यथार्थ बोध नहीं हो सकता। इस संसार में बड़े वीर और दानी हो चुके हैं, लेकिन मोक्ष पद को तो वही प्राप्त करते हैं, जो सच्चे गुरु को धारण कर उनकी सेवा भक्ति में लग जाते हैं। गुरु ही मुक्तिदाता हैं, जो गुरु से विमुख होगा, वह जरूर ही संसार के किसी पदार्थ के लिए होगा; क्योंकि गुरु भक्ति और माया का विरोध है। जो माया का भक्त है, वह गुरु भक्ति से आज नहीं तो कल गिर ही जाता है। इसलिए सत्संग से जुड़े रहो ताकि संत-महात्मा तुम्हें सावधान करते रहें, अन्यथा कब माया-मोह में भटक जाओगे, तुम स्वयं भी नहीं जान पाओगे। इस मनुष्य शरीर रूपी रत्न की कीमत समझो और इसे सार्थक बनाओ। ■

गुरु पइयां लागूं, नाम लखाय दीजो रे

परमसंत सद्गुरुदेव श्री हंस जी महाराज

प्रेमी सज्जनो! धर्मदास जी, जो काशी के राजा और अपने समय के एक बहुत बड़े भक्त हुए हैं। उन्होंने भी एक भजन में सद्गुरु महाराज से विनती की है-

गुरु पइयाँ लागूं नाम लखाय दीजो रे।।
जन्म-जन्म का सोया मनुवां, शब्दन मार जगाय दीजो रे।।

मैं उन गुरु महाराज जी के चरण कमलों में दण्डवत प्रणाम करता हूँ, जिन्होंने मुझे भगवान के उस सच्चे नाम को लखाया है अर्थात ज्ञान कराया है। मेरे हृदय में अंधेरा था, क्योंकि ज्ञान रूपी नेत्रों के बिना कुछ सूझता ही नहीं था, परन्तु अब गुरु महाराज ने ज्ञानरूपी दीपक जलाकर मेरे हृदय में उजाला कर दिया है। तो भाई! तुम स्वयं विचार करो कि मेरे पीछे आँखें नहीं हैं, मैं पीछे नहीं देख सकता। ठीक ऐसे ही घट के अन्दर इन बाह्य आँखों से कैसे देखोगे? अन्दर विषय विकारों की लहरें उठती हैं, तो वे प्रार्थना करते हैं कि हे गुरु महाराज! आपने बड़ी कृपा करके मुझे अमृत बूँद का पान करा दिया है। प्रभु का वही नाम अमृत है और कुछ नहीं। यह संसार सागर बहुत ही गहरा है, इसका कोई आदि-अन्त नहीं दिखाई पड़ रहा है, तो प्रार्थना करते हैं कि प्रभु! इस बार तो अवश्य ही मेरी नैया को खे-कर पार कर देना। भक्त मीराबाई ने भी एक भजन में कहा है-



पायो जी मैंने नाम रतन धन पायो ।।
वस्तु अमोलक दई मेरे सद्गुरु, कर कृपा अपनायो ।।
जन्म-जन्म की पूँजी पाई, जग का सभी गँवायो ।।
खर्च न होवे, चोर न लेवे, दिन-दिन बढ़त सवायो।।
मीरा के प्रभु गिरधर नागर, हर्ष-हर्ष जस गायो।।

मीरा गाती है कि मुझको मेरे सद्गुरु महाराज से नाम रूपी अमूल्य रत्न मिल गया है। वह कैसा खजाना है? तो मीरा गाती है कि वह खर्च नहीं होता है और न कोई चोर ही उसको चुरा सकता है, बल्कि यह दिन-दिन सवाया ही होता जाता है। फिर कहती है कि सत्य की नाव के खेवट बनकर भवसागर से पार करने वाले इस संसार में केवल गुरु महाराज ही हैं। केवल उन्हीं से उस सच्चे ज्ञान का उपदेश हो सकता है। भगवान श्रीकृष्ण अध्याय 5 के श्लोक 6 में अर्जुन को समझाते हैं कि तू युद्ध भी कर और निरंतर सुमिरण भी कर। जब युद्ध करते हुए भी आदमी भजन कर सकता है (जहाँ तीन बातें होती हैं-दुष्ट शत्रु का संहार करना, अपना बचाव करना और मृत्यु का भय) तो कोई कारण नहीं कि बाकी दुनिया भर के काम करते समय वह सुमिरण न हो सके। अरे भाई! वह है ही हर समय लेने वाला नाम। वह नाम सोलह स्वर और छत्तीस व्यजनों से परे है। वही पावन नाम है, जिसके लिए संत तुलसीदास जी भी कहते हैं-

सुमिर पवन सुत पावन नामू।
अपने बस करि राखेऊ रामू।।

अर्थात उसी पावन नाम का स्मरण करके पवन सुत हनुमान जी ने भगवान राम को भी अपने वश में कर लिया। उसी सच्चे स्वरूप को प्रकाश कहा है, चांदना कहा है। तुलसीदास जी ने कहा है-

राम भगति चिन्तामनि सुन्दर।
बसइ गरुड़ जाके उर अन्दर।।
परम प्रकाश रूप दिन राती।

नहिं चाहिये कछु दिया घृत बाती।।

राम की भक्ति की उपमा चिन्तामणि से दी है। उस मणि से रात्रि में भी अंधेरा नहीं होता है, उसके रहते हुए मनुष्य कंगाल नहीं होता है। जिसके पास वह मणि होती है, उस पर जहर असर नहीं करता है। इसलिए जब महादेव जी ने विष पीया तो वह अमृत बन गया। तभी तो कहा-

नाम प्रभाव जान शिव नीको।
काल कूट फल दीन्ह अमी को।।

भगवान के नाम सुमिरण का इतना बड़ा प्रभाव है कि मीराबाई ने जहर का प्याला पिया और वह जहर अमृत में बदल गया। भक्त ध्रुव ने पांच साल की अवस्था में उस नाम का सुमिरण किया और अचल धाम को प्राप्त हो गया-

ध्रुव सगलानि जपेऊ हरि नामू।
पायेऊ अचल अनूपम धामू।।

तो दुनिया के लोगो! जो कुछ पढ़ते हो, उस पर जरा विचार करो कि शास्त्रों में क्या कहा है, क्या हमको करना है और क्या हम कर रहे हैं? गीता में भी भगवान श्रीकृष्ण अर्जुन को समझाते हुए आठवें अध्याय के पांचवें श्लोक में कहते हैं-

अन्तकाले च मामेव
स्मरन्मुक्त्वा कलेवरम्।
यः प्रयाति स मद्भावं
याति नास्त्यत्र संशय।।5।।

अर्थात् जो पुरुष अंतकाल में मेरा स्मरण करते हुए शरीर को त्यागता है, वह मेरे ही (साक्षात) स्वरूप को प्राप्त होता है। फिर अगले श्लोक में समझाया-

यं यं वापि स्मरन्भावं
त्यजत्यन्ते कलेवरम्।
तं तमेवैति कौन्तेय
सदा तद्भावभावितः।।6।।

अर्थात् अंतकाल में उसी भाव का ही स्मरण होता है, जिसका मनुष्य जीवन पर्यन्त स्मरण करता है। इसलिये 7वें श्लोक में कहते हैं-

तस्मात्सर्वेषु कालेषु
मामनुस्मर युद्ध च।
मध्यअर्पित मनोबुद्धि
र्भामेवैष्यस्य संशयम्।।

मन बुद्धि को मेरे अर्पण करते हुए निरंतर उठते-बैठते, सोते-जागते, चलते-फिरते, खाते-पीते हर समय मेरा स्मरण कर।

> कई महात्मा कपड़े रंगाते हैं, कई नंगे होकर धूनी तापते हैं, पर ये भी योगी नहीं हैं। योगी तो वही है, जो अपने मन को परमात्मा के नाम में जोड़ता है। जिसकी वृत्ति परमात्मा के प्रकाश स्वरूप में लीन हो गई है, योगी वही कहलाता है।

अब मैं आप लोगों से कहता हूँ कि आप स्वयं ही अपने-अपने जज बनो और इन्साफ करो कि वह कौन-सा भजन है, जो इंसान को निरंतर याद आ सके? तभी तो आखिरी स्वांस निकलते समय भी याद आ सकेगा। और मन बुद्धि किसको, कहां और कैसे अर्पण करते हो? अभी अलीगढ़ की नुमाइश में हमारा बहुत बड़ा सत्संग का प्रोग्राम हुआ, जो कई दिनों तक चला। वहाँ एक जज साहब भी आए। वे गीता का पाठ करते थे और बोले मैं खूब समझता हूँ। मैंने उनसे पूछा कि क्या जप, तप, व्रत, योग, यज्ञ, हवन, माला फेरना, गीता, रामायण या वेदों का पढ़ना, मूर्तियों पर बेल पत्र आदि चढ़ाना अंत समय में हो सकते हैं? तुम लोग नमाज पढ़ते हो या गायत्री मंत्र का जाप करते हो, यह ठीक है पर मैं पूछता हूँ- क्या ये सब अन्त समय में हो सकेंगे? जब आँखें बन्द हो जाएंगी और न खुल सकेंगी, उस समय यदि आखिरी स्वांस निकल गयी, तो सोचो, क्या मूर्तियों के दर्शन हो सकेंगे? जब खुला हुआ मुँह बन्द न हो सकेगा, तो उस समय कैसे 'राम' शब्द का उच्चारण करोगे? नहीं कर सकते। दुनियाँ के लोगो! मनुष्य शरीर हम सबको मिला हुआ है, जरा विचार करो! अपने फायदे की बात के लिए, इसमें तुम्हारा ही लाभ है। रामचरित मानस में कहा है-

हित अनहित पशु पक्षी जाना।
मानुष तनु गुन ज्ञान निधाना।।

अपना भला और बुरा तो पशु और पक्षी सभी जान लेते हैं; परन्तु यदि हमने मनुष्य तन पाकर भी अपना हित और अनहित नहीं सोचा, ऐसा मनुष्य तन, जिसको गुणों और ज्ञान का खजाना बताया है, तो धिक्कार है ऐसे मनुष्य तन पाने को। आज तक जितने भी महापुरुष हुए, सबने इसी एक ही बात को समझाने का प्रयत्न किया, पर दुनिया ने उनकी एक न मानी, बल्कि उनके और दुश्मन ही हो गए। तभी तो कबीरदास जी को कहना पड़ा-

ये जग अंधा मैं केहि समझाऊँ।
एक दो होयं उन्हें समझाऊँ ।
सभी भुलाना पेट का धन्धा ।।

अर्थात किस-किस को समझाऊँ? सभी पेट के धन्धों में लगे हुए हैं। किसी को सुनने और समझने की फुर्सत ही नहीं है। दुनियां के झूठे धन्धों में मनुष्य लगा रहता है और फिर एक दिन यहाँ से खाली हाथ चला जाता है। इसलिये दुनिया के लोगो! अपने साथ जाने वाली कमाई करो, जो मरने पर भी जीव के साथ जाती है। वही एक वस्तु है जो मरने पर भी काम में आती है, बाकी सब यहीं की यहीं रह जाती है।

यों तो बड़े-बड़े मिलिट्री के ओहदेदार सीमाओं पर जाग कर पहरा देते हैं, रात्रि ड्यूटी में सिपाही भी जागते ही हैं। स्टेशनों पर मुसाफिर गाड़ियों के इंतजार में जागते हैं। चोर भी चोरी के लिये सारी रात जागते हैं, पर इनको योगी नहीं कह सकते।

कई महात्मा कपड़े रंगाते हैं, कई नंगे होकर धूनी तापते हैं, पर ये भी योगी नहीं हैं। योगी तो वही है, जो अपने मन को परमात्मा के नाम में जोड़ता है। जिसकी वृत्ति परमात्मा के प्रकाश स्वरूप में लीन हो गई है, योगी वही कहलाता है।_संसार के विषयों का चिंतन करते हुए जागने से तो सोना ही भला है। शेर, सांप और चोर तो सोते ही रहें, तो अच्छे हैं; क्योंकि उठकर ये दूसरों को नुकसान ही पहुंचायेंगे। साधु और मुसाफिर को जगाना ही अच्छा है। मुसाफिर जागकर अपनी मंजिल तय करेगा तथा साधु उठकर परमात्मा का स्मरण करेगा। संसार में एक भक्त ही जागता है, जिसकी अन्दर से परमात्मा में लौ लगी हुई है, वही परमात्मा को जानने वाला है, उसी का मोहरूपी अन्धकार दूर होता है और वही भगवान का प्यारा है। भगवान राम ने एक समय हनुमान जी से पूछा- हनुमान जी! यदि तुमसे कोई पूछ बैठे कि ये (रामचन्द्र जी) तुम्हारे क्या लगते हैं, तो तुम क्या उत्तर दोगे? हनुमान जी ने कहा, प्रभु जी! मैं तो यही कहूंगा कि मैं शरीर से प्रभु का दास हूं, ये मेरे इष्टदेव तथा स्वामी हैं। जीव के नाते अंश और आत्मा के नाते से दोनों ही बराबर हैं। देखो! सेवा से ही स्वामी को खुश किया जाता है। भगवान राम काक भुसुण्डि से कहते हैं, सेवक मुझे प्राणों से भी प्यारा है।

संसार में एक भक्त ही जागता है, जिसकी अन्दर से परमात्मा में लौ लगी हुई है, वही परमात्मा को जानने वाला है, उसी का मोहरूपी अन्धकार दूर होता है और वही भगवान का प्यारा है।

जिस योग का इतना महत्व है, जो लोग इसकी बातें सुनते हैं, इसकी आपस में चर्चा करते हैं, जो सुनकर इन बातों पर विचार और मनन करते हैं, फिर सद्गुरु द्वारा अपने हृदय में इस योग को जान कर साधन करते हैं, वही इस संसार में सच्चे योगी और भक्त हैं। भगवान कालातीत हैं, माया काल है। माया को चाहने वाला भोगों की कामना करते आवागमन के चक्र में घूमता रहता है। जब से सृष्टि बनी है, तभी से माया है और तभी से जीव है। न जीव माया का लालच अथवा चिन्तन छोड़ता है और न परम सुखी होता है।

आज अगर मान लो, कोई भीख मांगने वाला है; वह सपने में चक्रवर्ती सम्राट बन जाए, तो आंख खुलने पर फिर भिखारी ही रहेगा। इसी तरह अगर कोई चक्रवर्ती सम्राट सपने में भिखारी हो गया, तो आंख खुलने पर वह चक्रवर्ती सम्राट ही तो रहेगा? इसी तरह से आजकल के ये जो ब्रह्मज्ञानी हैं, वे भगवान को भूले हुए हैं, उनके लिए यह स्वप्न है। जब उनकी मौत होगी, तो फिर पहले की तरह वैसे ही चौरासी में चक्कर लगाते रहेंगे। कभी गधा बनेंगे, कभी कुत्ता बनेंगे और कभी घोड़ा बनेंगे, क्योंकि फिर इन्हें कोई भी चौरासी से नहीं छुड़ा सकता, केवल एक प्रभु की भक्ति ही है, जो इन्हें चौरासी से छुड़ा सकती है। तो ऐसी है प्रभु की भक्ति, जिसकी महिमा स्वयं भगवान ने गायी। भक्ति स्वतन्त्र है और सभी सुखों को देने वाली है। भक्ति करने के लिए वेद पढ़ने की, यज्ञ करने की या दान-पुण्य आदि करने की जरूरत नहीं है।

भगति स्वतंत्र सकल गुन खानी।
बिनु सतसंग न पावइ प्रानी॥

भक्ति हर एक आदमी कर सकता है। कहा है-

लेने को हरि नाम है,
देने को अन्नदान।
तरने को आधीनता,
डूबन को अभिमान।।

अभिमान को छोड़ो, भक्ति मार्ग में अभिमान नहीं चलता। अभिमान भक्त के पतन का कारण है। हम बहुत बड़े मिनिस्टर हैं या प्रेसीडेंट हैं या बड़े भारी सेठ हैं, हमारी इतनी मिलें चलती हैं, हम इतने बड़े राजा हैं, यह सब झूठा मान-गुमान है। आत्मा का भला तो प्रभु भक्ति से ही होगा। इसलिए पूर्ण समर्पण भाव से प्रभु भक्ति में लगें।

जिन रचा शरीर तुम्हारा, उसका क्यों नाम बिसारा

श्री भोले जी महाराज

प्रेमी सज्जनो! अभी आप लोगों ने बहुत सुन्दर भजन सुना-

सन्देशा सन्त फकीरों का,
तुम्हें याद कोई दिन आयेगा।

जब हमारे शरीर से प्राण निकल रहे होंगे, तब हमको याद आयेगा कि एक बार हमारे शहर में संत-महात्मा आये थे। हमने उनका सत्संग ध्यान से नहीं सुना और हमने यह मनुष्य शरीर केवल भोग-पदार्थों के सेवन करने में ही गंवा दिया। बच्चा हो या जवान अथवा बूढ़ा- सभी को एक दिन संसार छोड़कर जाना होगा। जब काल आयेगा, वह किसी को भी नहीं छोड़ता। काल न जाने कब, किसको और कहां से ले जाये। मृत्यु का कोई मुहूर्त नहीं निकलता, वह कभी भी आ सकती है। भजन में कहा है-

रे मन ये दो दिन का मेला रहेगा,
कायम न जग का झमेला रहेगा।।
इससे तो आगे भजन ही है साथी,
हरि के भजन बिन अकेला रहेगा।।

मरने के बाद केवल भगवान के भजन की कमाई ही साथ में जायेगी, बाकी संसार का सब कुछ यहीं पर छूट जायेगा। एक सेठ जी थे। उनके पास बहुत धन था। एक साधु महाराज उनके पास आये। वे कहने लगे- सेठ जी! आपका मकान एक सराय है। सेठ ने कहा- महाराज! यह तो मेरा घर है। आपने कैसे कह दिया कि यह सराय है।



साधु महाराज ने कहा कि इस मकान में आपसे पहले कौन रहते थे? जवाब दिया- मेरे दादा, परदादा रहते थे। साधु महाराज ने पूछा कि आज वे सब कहां हैं? कहा- महाराज! वे सब चले गये। साधु महाराज ने कहा- आप भी एक दिन चले जाओगे। आपके बच्चे भी यहां से चले जायेंगे, तो यह मकान एक सराय ही तो हुआ। सेठ जी ने सोचा कि साधु महाराज की यह बात तो बहुत सही है। यहां तो हमेशा कोई नहीं रह पाया। यह संसार तो चंद दिनों का मेला है। भजन में कहा-

दो दिन का जग में मेला,
सब चला चली का खेला।।

सेठ जी ने पूछा कि जब यह सारा संसार दो दिन का ही मेला है, तो इस संसार में सत्य क्या है? कृपा करके मुझे उस सत्य का ज्ञान कराइए। साधु महाराज ने सेठ जी को आत्मज्ञान दिया, तब उनकी समझ में आया कि वाकई में जो साधु महाराज कह रहे थे, वह बात बिलकुल सच है। संसार का सब कुछ यहीं पर छूट जायेगा, केवल प्रभु के सच्चे नाम की कमाई ही साथ जायेगी। उस नाम की कमाई को हमें समझना है, जानना है। संत ब्रह्मानंद जी ने भजन में कहा-

सुनो-सुनो वचन नर नारी,
हरि भजन करो सुखकारी।
जिन रचा शरीर तुम्हारा,
उसका क्यों नाम बिसारा।

जो यह मनुष्य शरीर हमने धारण किया है, वह किसलिए धारण किया है? सांसारिक भोग तो हम पशु-पक्षी और अन्य योनियों में भोग सकते हैं, लेकिन उन योनियों में आत्मा का ज्ञान नहीं जान सकते। आत्मा का ज्ञान मनुष्य शरीर में ही जान सकते हैं।

भगवान् बुद्ध, जिनका बचपन का नाम राजकुमार सिद्धार्थ था। जब वे बड़े हुये, तो उन्होंने अपने मंत्री से नगर भ्रमण की इच्छा व्यक्त की। मंत्री के साथ भ्रमण करते हुए उन्होंने रास्ते में एक बूढ़े व्यक्ति, एक रोगी और फिर एक मृतक व्यक्ति को देखा। सिद्धार्थ के अंदर विचार आया कि क्या एक दिन मैं भी बूढ़ा हो जाऊंगा, मैं भी बीमार हो जाऊँगा और क्या एक दिन मेरी भी मृत्यु हो जायेगी। इस घटना से उनको वैराग्य हो गया और वे सत्य की खोज में घर से बाहर निकल पड़े और बोधिसत्व को प्राप्त किया।

सद्गुरु ही कराते हैं सत्यज्ञान का बोध

माताश्री राजेश्वरी देवी

प्रेमी सज्जनो! आपने यहाँ पर दो दिनों से प्रवचन सुने। आप लोगों को घर बैठे-बैठे ऐसे प्रवचन सुनने को नहीं मिलते। महापुरुष के दर्शन और सत्संग बड़े भाग्य से प्राप्त होते हैं।

आज मेरे पास बहुत से लोग आए, कल भी आए थे। लोग भिन्न-भिन्न विचार लेकर आते हैं। बहुतों की कामना है कि मेरा बेटा हो, बहुत लोग कहते हैं कि हम तो निर्धन हैं। लोग अपनी-अपनी भावनाओं को लेकर आते हैं। बहुत से लोग दानी भी हैं, जो चाहते हैं कि हम अच्छा कर्म करें, ज्ञानियों को भोजन कराएं। कोई रोता है कि मेरे परिवार से बेटा चला गया, मतलब कि जिसकी हमने सेवा की, जब वह हमसे बिछुड़ जाता है, तो हमें उसकी याद आती है। पर हम लोग इस बात को भूल जाते हैं कि एक दिन इस संसार से हमको भी जाना है; एक दिन सभी को जाना है। तभी कहा-

रहना नहीं देश बिराना है।

इस संसार में कोई भी अमर नहीं रहा, सभी आए और चले गये। पर मैं उस मनुष्य को विवेकी और बुद्धिमान समझती हूँ, जो मनुष्य जन्म लेकर अपने मार्ग की तलाश करता है, जो अपने मार्ग को ढूँढ़ता है, वह व्यक्ति महान होता है। जब हम किसी नए स्थान या देश में जाते हैं, तो हम वहाँ के गाइड को साथ लेते हैं कि भाई, यहाँ के बारे में बताओ कि यहाँ क्या-



क्या चीजें ऐतिहासिक हैं। वहाँ का जो स्थानीय व्यक्ति रहता है, वह वहाँ के बारे में बताता है। जब तक हम किसी गाइड को अपने साथ नहीं लेंगे, तब तक हम वहाँ की चीजों से अनभिज्ञ रहेंगे। जैसे मैं बदरीनाथ गयी, तो मैंने कहा- भाई, मुझे यहाँ के बारे में अच्छी तरह जानकारी नहीं है। कहने लगे- माँ, हम आपको यहाँ की जानकारी देना चाहते हैं, परंतु आपके पास टाइम ही नहीं है। इसके लिए आपको टाइम देना पड़ेगा! ऐसे ही यह संसार है, जब तक हम गाइड को साथ नहीं लेंगे, तो हमें क्या पता कि इस जीवन से हमें क्या प्राप्त करना है? जिसका हमें ज्ञान है, वह कार्य तो हम कर ही रहे हैं, पर ज्ञानी तो हमें कुछ और चीज को जनाता है। कहा है-

वस्तु कहीं ढूँढ़े कहीं,
केहि विधि आवे हाथ।
कबीर वस्तु तब पाइए,
जब भेदी लीजे साथ।।

जब भेदी को साथ लोगे, तब वह वस्तु मिलेगी। कबीर साहब कहते हैं-

चलन-चलन सब कोई कहे,
मोहे अंदेशा और।
नाम न जानें गाँव का,
पहुँचेगा केहि ठौर।।

जिस जगह हमें पहुँचना है, उसको जानना जरूरी है। कई लोग कहते हैं कि संसार का वैभव हमने कमा लिया, समाज में मान-प्रतिष्ठा हमने प्राप्त कर ली। बस, यही हमारे जीवन का लक्ष्य है। कई लोग कहते हैं कि अभी तो हमारे परिवार में बहुत काम है। बेटे की शादी करनी है, बेटी की शादी करनी है। संत कहते हैं, शास्त्र कहते हैं कि जब हम गर्भ में थे, तब भगवान से प्रार्थना कर रहे थे कि हे भगवान! मुझे इस जठराग्नि से बाहर निकाल, हम तेरा भजन करेंगे। अंधेरे में हमारा जीवन कितना दु:खमय हो जाता है, जब प्रकाश होता है, तो वही दु:खमय जीवन सुखमय बन जाता है। यही जीवात्मा माँ के गर्भ में

9 महीने अनेक दु:खों को उठाती है, फिर बाहर आकर रोती है कि मैं कहाँ आ गई हूँ? वह बालक कहां-कहां की आवाज करके रोता है। कौन उसको रोना सिखाता है? हम सभी पहले शिशु रूप में थे, हम सभी माँ के गर्भ में रहे और जब हम बाहर आए, तो उस समय हमें बाहर का ज्ञान नहीं था। सबसे पहले माता सिखाती है कि यह तेरा पिता है, यह तेरा चाचा है, मैं तेरी मां हूं। मतलब कि मां अपने बच्चे को सभी चीजों का ज्ञान कराती है। बाद में उसके अंदर मेरा-तेरा के संस्कार भर जाते हैं और उन्हीं संस्कारों में वह बंध जाता है। जैसे सूर्य की रोशनी तो रोज होती है; रोशनी तो है, पर वह बादलों से ढक जाती है। यही बात भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं कि हे अर्जुन! जिस तरह से बालक मां के गर्भ में जेर से ढका रहता है, जिस तरह से अग्नि धुएं से ढक जाती है, इसी तरह हे अर्जुन! यह ज्ञान भी अज्ञान से ढक जाता है। भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं कि हे अर्जुन! तू मेरा भक्त है, इसलिए मैं तुझे यह ज्ञान देना चाहता हूं। क्या अर्जुन ने पहले कोई साधन नहीं किया होगा? ऐसी बात नहीं, पर भगवान जानते थे कि जो साधन मैं दूंगा, वह अर्जुन नहीं जानता है। इसलिए वे कहते हैं कि तू तत्वदर्शी के पास जा, दण्डवत प्रणाम कर, निष्कपट भाव से उनकी सेवा कर, जब उनकी आत्मा प्रसन्न होगी, तो वे तुझे आत्मा का ज्ञान देंगे।

हम लोग चार धाम की यात्रा करते हैं। घर में आकर भंडारा करते हैं। मन में संतोष करते हैं कि हम तो चार धाम की यात्रा करके आ गए। पर, देखो! मन तो अशांत रहता है। मन शांत हो ही नहीं सकता है। मन का लक्ष्य क्या है? आप बताइए! आप सोए रहते हो और मन उसमें भी कर्म करता रहता है, वहां से भी वह भागता रहता है। फिर, जिन साधनों को तुम करते हो, उन साधनों से यह मन कैसे रुक सकता है? बहुत से लोग माला फेरते हैं, परंतु उनका मन कहीं और भागता रहता है। हम हिन्दू-धर्म या सिख-धर्म या जैन-धर्म के अंदर (अपने-अपने धर्म के अनुसार हर व्यक्ति) साधन करते हैं। अभी एक छोटा-सा नेपाली बालक मेरे पास आया था। वह इशारा तो उसको भी मालूम है-ध्यान की बात करने का, पर उस तत्व को वह समझता नहीं है। इसलिए हमारा मन भटक जाता है।

भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं कि हे अर्जुन! जिस तरह से बालक मां के गर्भ में जेर से ढका रहता है, जिस तरह से अग्नि धुएं से ढक जाती है, इसी तरह हे अर्जुन! यह ज्ञान भी अज्ञान से ढक जाता है।

अपने परिवार में रहते हुए, जब परिवार के कोई सदस्य हमसे बिछुड़ जाते हैं, तो बार-बार हमको वही चीज याद आती है कि वे हमारे थे और कहाँ चले गये? जरा भी हृदय के अंदर वैराग्य नहीं। अगर वह हमारा होता, तो वह हमारे पास रहता। जिसकी वस्तु है, वह ले गया। वह जब चाहे तभी उठाकर ले जाता है। आप देखिए कि जब आप किसी को कर्जा देते हो, किसी की मदद करते हो, तो जब चाहे तब आप उसके द्वार पर खड़े हो सकते हो कि ला भाई, मेरी अमानत। यही बात भगवान की भी है। यह जो हमारा शरीर है- यह उसकी अमानत है, वह जब चाहे तभी ले सकता है। इसलिए जो संत लोग होते हैं, ज्ञानी लोग होते हैं और जो आत्म-तत्वदर्शी होते हैं, वे ध्यान का महत्व बताते हैं। वे कहते हैं कि परमात्मा के नाम में ध्यान लगाने से ही मन शांत होता है और बाकी किसी प्रकार से यह मन शांत नहीं हो सकता है। इसलिए समय के तत्वदर्शी की आवश्यकता होती है, क्योंकि वही हमको ज्ञान करा सकता है। देखो, हमारे खाने के कितने रास्ते हैं? कितने ही किस्म के मजहब हैं, परंतु सबके खाने का रास्ता एक है। सभी मुंह से ही खाते हैं। देखने के लिए सबकी आंखें आगे ही हैं, पीछे किसी की नहीं। सुनने के लिए सबके कान एक ही जगह पर बने हुए हैं, चाहे वह किसी मजहब का हो, किसी कौम का हो, चाहे वह किसी भी देश का हो-सबके दो ही कान होते हैं। सबके पास बोलने के लिए जुबान है, चलने के लिए पैर हैं। यह नहीं कि किसी मजहब वाले के पैर पीछे हों। धर्म कभी भी आपस में लड़ना नहीं सिखाता है। जब अंगुलिमाल भगवान बुद्ध से मिला, तो वह बड़ा खुश हुआ कि यह बड़ा खूबसूरत व्यक्ति मेरे सामने आ गया। अब मैं इसकी उंगली काटूँगा और उससे अपना हार बनाऊँगा। अंगुलिमाल हिंसक प्रवृत्ति का व्यक्ति था और मनुष्य की उंगलियों को काटकर हार बनाता था। भगवान बुद्ध उससे पूछते हैं कि तू ऐसा काम क्यों करता है? जब तूने मनुष्य को बनाया ही नहीं, तो फिर तू मनुष्य की उंगलियों को क्यों काटता है? वह कहता है कि नहीं, मैं इन विचारों को नहीं मानता हूं। जैसे बहुत से हठधर्मी होते हैं, वे कहते हैं कि भगवान नाम की कोई चीज नहीं

है, जैसे उनके माता-पिताओं ने उनके श्वांसों को वसीयत में दिया हो। परंतु नहीं, उन श्वांसों को देने वाला कोई और है।

पहले तो अंगुलिमाल बोला कि मैं इन बातों को नहीं मानता हूँ, परंतु जब बुद्ध ने उसको समझाया, तो अंगुलिमाल भी उनका शिष्य और भिक्षुक बन गया। इसी तरह रत्नाकर के बारे में आता है कि वह डाकू था। उसको जब नारद मिलते हैं, तो वह कहता है कि अहा! आज मैं तुझे मारूँगा। तब नारद जी उससे कहते हैं कि देख! तू मुझे बाद में मारना, पहले अपने परिवार के लोगों से पूछकर आ कि मैं जो पाप करके लाता हूँ, जो चोरी करके लाता हूँ, क्या तुम भी उस पाप के भागीदार बनोगे? उसने अपने घर जाकर परिवारजनों से, पत्नी से और माता-पिता से पूछा, तो उन सबने कहा कि नहीं, हम तुम्हारे इस पाप के भागीदार नहीं बनेंगे। यदि तुम्हारी उंगली अग्नि में डालें, तो तुमको ही दर्द होगा। आदमी जैसा कर्म करेगा, उसे उसका वैसा ही फल मिलेगा। हमें तो पता ही नहीं कि तू पाप की कमाई लाता है। इसलिए हम भागीदार नहीं बनेंगे। जो जैसा कर्म करेगा, वह उसका वैसा ही फल पायेगा। नारद जी का सत्संग सुनकर रत्नाकर का मन बदल गया। रत्नाकर ने नारद जी के पैरों में गिरकर क्षमा मांगी तथा उनसे आत्मज्ञान को जानकर अपने जीवन को धन्य किया।

इसी तरह से आप हरियाणा के वासी हो, यहीं पर वह कुरुक्षेत्र है, जहाँ धर्म का पाठ पढ़ाया गया। जहां पर 18 अक्षौहिणी सेना लड़ने के लिए आयी थी, यहाँ पर एक योद्धा ऐसा भी निकल गया जो धर्म के रास्ते को अपनाता है, जो हित और अनहित की बात को समझकर हित की बात को अपनाता है। जिस जगह अट्ठारह अक्षौहिणी सेना लड़ाई के लिए आयी थी, वहीं पर भगवान श्रीकृष्ण अर्जुन से ज्ञान की चर्चा करते हैं, ज्ञान-विज्ञान सहित उसको समझाते हैं। भगवान कहते हैं- जो व्यक्ति अपने धर्म को नहीं जानता, वह अपने को नहीं जानता, वह मरे हुए के समान है। यहां पर किसान भाई अधिक मात्रा में हैं। देखो, जब आप खेती करते हो, तो कितनी मेहनत करनी पड़ती है और तब एक दिन जाकर वह अनाज हमारे शरीर के लिए संजीवनी बन जाता है, तब हम अपनी भूख को मिटाते हैं। जो कर्म किया, उसका फल पाया। सर्दी-गर्मी की चिन्ता किये बिना केवल अपनी खेती से मतलब रखा। इसीलिए कहा-

कर्म प्रधान विश्व रचि राखा।
जो जस करहि सो तस फल चाखा।।

भगवान ने हमें कर्म के क्षेत्र में उतारा है; अब, हम चाहे जिस चीज को भी अपनावें। भगवान ने हमारे लिए कर्मक्षेत्र फैला रखा है। इसलिए साधु लोग कहते हैं कि हमें परमात्मा के नाम को जानना चाहिए। कर्म तो सभी करते हैं; पर, एक कर्म वह होता है, जो लख चौरासी में ले जाता है और एक कर्म वह होता है, जिसके करने से जीवात्मा मुक्त हो जाती है। इसीलिए माताओं, आप लोग मीराबाई की जीवनी को देखो। कबीर साहब ने कहा है-

घूँघट के पट खोल री,
तोहे पिया मिलेंगे।

कौन-सा घूँघट कबीरदास जी ने खोला, जिससे हृदय में पिया के दर्शन होते हैं। मीराबाई कहती है-

औरों के पिया परदेश बसत हैं,
लिख लिख भेजें पाती।
मेरे पिया मेरे हृदय बसत हैं,
ना कहीं आती ना जाती।।

मीराबाई कहती है कि संसार की स्त्रियों के पति तो परदेश में बसते हैं, पर, मेरा जो पति है, वह मेरे हृदय में रहता है; वह कभी भी मेरे से जुदा नहीं होता। मीराबाई ने महलों की रानी होकर भी आत्मज्ञान को जाना और आत्मज्ञान जान कर कहती है-

पायो जी मैंने नाम रतन धन पायो।
वस्तु अमोलक दई मेरे सद्गुरु,
कर कृपा अपनायो।

देखो, मीराबाई अपने मुख से बखान करती है कि मैंने नाम रूपी रतन धन प्राप्त कर लिया है। हे माताओ! वेदों का पाठ आप नहीं कर सकती हैं, अखण्ड पाठ आप नहीं कर सकती हैं, जब हम सो जाते हैं, तो नींद में वह पाठ भी खण्डित हो जाता है। साधु-सन्त, ज्ञानी और धर्मशास्त्र भी कहते हैं कि हम दसों इन्द्रियों से अपने गृहस्थाश्रम की देखभाल कर सकते हैं, पर, ग्यारहवाँ जो मन है, उससे भगवान के नाम का चिन्तन करना चाहिए। इसी से हृदय-स्थित पिया से मिलन होगा। इस सत्य का बोध सद्गुरु महाराज ही कराते हैं।

जैसे बहुत से हठधर्मी होते हैं, वे कहते हैं कि भगवान नाम की कोई चीज नहीं है, जैसे कि उनके श्वांसों को उनके माता-पिताओं ने वसीयत में दिया हो। परंतु नहीं, उन श्वांसों को देने वाला कोई और है।

करत करत अभ्यास के, जड़मति होत सुजान

माताश्री मंगला जी

प्रेमी सज्जनो! देखो, अभी इतने बड़े उद्योगपति टाटा शरीर छोड़कर चले गये, सबने सुना, उनके पास क्या नहीं था, दौलत थी, शोहरत थी, सब कुछ था; लेकिन जब संसार से गए, तो साथ में क्या ले गए? सब यहीं का यहीं रह गया। नाम यहीं रह गया और बड़े धार्मिक भी थे, दानी भी थे। मुम्बई में उनका टाटा मेमोरियल केंसर हॉस्पीटल देख लीजिए, टाटा की टेक्नोलोजी देख लीजिए, इंजीनियरिंग कॉलेज देख लीजिए, आने वाले समाज के लिए बहुत-सी दौलत और प्रतिष्ठान छोड़ गए। परंतु जब मौत आई, तो एक सेकेंड में इधर से उधर चले गए। आज उनके नाम से कितने वर्षों तक, कितने बच्चों का इलाज चलेगा, कितने बच्चे शिक्षित होंगे; धन तो वे भी साथ नहीं ले गए, लेकिन उस धन से सेवा के जो प्रतिष्ठान स्थापित कर गए हैं, उनसे हजारों लोगों का कल्याण होगा। आज हमारी संस्था द हंस फाउण्डेशन ने 15वें वर्ष में प्रवेश किया है। सेवा करते हुए तो हमें 20-22 साल हो गए, लेकिन 15 वर्ष पहले श्री हंस जी महाराज के नाम से फाउण्डेशन स्थापित किया। आज वही द हंस फाउण्डेशन देश के लगभग सभी राज्यों में अपना सेवा उपक्रम चला रहा है। यह मैं गर्व से कह रही हूं, यह मैं प्रचार नहीं कर रही हूं, यह मैं उनकी कृपा के लिए कह रही हूं कि श्री महाराज जी की इतनी कृपा है कि उस कृपा से आज हजारों बच्चों का इलाज हो चुका है। यहाँ बगल में ही थोड़ी दूर में बहादराबाद में हंस आई केयर "आंखों का अस्पताल" है, जहां पर हजारों जरूरतमंद रोगियों की आंखों



का इलाज हो रहा है। मैं हर महीने उनसे रिपोर्ट लेती हूं। वहाँ हजारों लोगों की आंखें बन गई हैं। भगवान ने जो आंखें दे रखी थीं, उनमें रोग लग गया, तो वर्तमान समय के वैज्ञानिकों ने ऐसे यंत्र बनाए कि वो उस बीमारी को भी हटा देते हैं। वो अब देखने लग गए हैं। हंस हॉस्पीटल सतपुली में पूरा गढ़वाल और कुमाऊं का क्षेत्र इलाज कराने आ रहा है। वह हॉस्पीटल हजारों लोगों को चिकित्सा दे रहा है। कई राज्यों में बच्चों की शिक्षा, बच्चों का इलाज किया जा रहा है; क्योंकि यह सेवा बड़े भाग्य से मिलती है। कितने ही डायलिसिस सेंटर खोले गए हैं। एक बार देहरादून में एक रिक्शा वाला बोला कि मां जी, मैं जितना कमाता नहीं, मेरा हर तीसरे दिन डायलिसिस करना पड़ता है। खैर, द हंस फाउण्डेशन ने उसकी मदद की, फिर कोई दूसरा आ गया। सब छोटे-छोटे गरीब बेचारे, जो दिन भर मेहनत कर अपनी रोजी रोटी कमाते हैं, वे इलाज नहीं करा सकते। इलाज इतना महंगा है। आज पूरे भारतवर्ष में फाउण्डेशन ने फ्री डायलिसिस सेंटर खोल दिए हैं, महीने में तीन बार करो, चार बार करो; किसी को तो डायलिसिस कराने पांच-पांच बार जाना पड़ता है; जब स्वास्थ्य अच्छा रहेगा, तो हम उस भक्ति को भी समझ सकते हैं। यह तो एक छोटी-सी सेवा मैंने बताई है। आज के समय में हमें शरीर भी स्वस्थ चाहिए। जब शरीर स्वस्थ होगा, तो हम सत्संग में बैठ सकेंगे, सत्संग में बैठेंगे, तो शरीर से हम सत्संग सुन रहे हैं। आत्मिक अनुभूति भी हमें तभी होगी, जब यह शरीर स्वस्थ हो। इसीलिए कहा कि मानुष चोला बड़ा अनमोल है।

मानुष जन्म अनमोल रे,
माटी में ना रोल रे।
अब तो मिला है, फिर ना मिलेगा,
कभी नहीं, कभी नहीं, कभी नहीं रे।

जब शरीर ही नहीं होगा, तो आप ऐसे नहीं बैठ सकते। जब यह शरीर छूट जाता है, तो घर में गलती से भी आ जाओगे, तो सभी भूत-भूत कहकर धक्का दे देंगे। वही मित्र, वही संबंधी, वही परिजन, भूत कह कर आपको घर से भगायेंगे; तो यह समझने की बात है। संतों ने क्यों कहा कि **'अपुन को आपन ही में पायो।'** जब तक सत्संग की गंगा में गोता नहीं लगाएंगे, तब तक वह ज्ञान की गठरी नहीं खुलेगी, जब तक अध्यात्म ज्ञान नहीं मिलेगा, तब तक हृदय के द्वार नहीं खुलेंगे। जब आप उस सच्चे नाम को जानोगे, सच्चे नाम का सुमिरण करोगे, तो स्वत: ही दिन-

प्रतिदिन उसमें आपका प्रेम बढ़ेगा, जब प्रेम बढ़ता है, तो समझ में आता है कि-

है प्रेम जगत में सार और कछु सार नहीं।

मीराबाई को प्रेम ने ही संत बनाया। मीराबाई जब छोटी थी, तो घर के नीचे बारात जा रही थी, मीराबाई देखती है कि घोड़े पर सजा-धजा एक व्यक्ति बैठा जा रहा है। मां पूछती है कि यह कौन है? माँ कहती है कि यह दूल्हा है, बारात लेकर दुल्हन को लेने जा रहा है। तो, वह माँ से जिद करती है। बच्चे होते हैं, कई बार जिद करते हैं कि मेरा दूल्हा कौन है? तो, जब बहुत जिद करने लगी, तो माँ भगवान कृष्ण की मूर्ति देकर कहती है कि यह तेरा दूल्हा है, यह तेरा पति है। अब बच्चे को ऐसे ही समझाया जाता है। बस, इतना कहना था और मीराबाई तन-मन से भगवान श्रीकृष्ण को अर्पित हो गयी। उस मूर्ति को लेकर गाने लगी-

औरों के पिया परदेस बसत हैं,
लिख-लिख भेजें पाती।
मेरे पिया मेरे हृदय बसत हैं,
कहीं ना आती ना जाती।।

जब मीराबाई प्रेम दिवानी बनकर संतों के पास गई, तब संतों ने कहा मीरा बावली मत बन, तेरे अंदर ही तेरा कृष्ण है। बाहर कहाँ भटक रही है। आजकल तो फोन हो गए हैं, तब तो पत्र ही जाते थे। भगवान तो प्रेम के भूखे हैं। मीराबाई ने संत रविदास के पास जाकर अध्यात्म ज्ञान की दीक्षा प्राप्त की। जब ज्ञान रूपी प्रकाश मिलता है, तो जिस जीव के अंदर उस ज्ञान की रोशनी प्रकट हो जाती है, वह जागृत बन जाता है। तो यह जो सत्संग है, सत्संग सुनने के बाद जागृति आ जाती है। हमें सत्य का बोध हो जाता है। हमने दाल भी खरीद ली, चावल भी खरीद लिये, सब कुछ खरीद लिया; पर अगर हमने चूल्हे में अग्नि नहीं जलाई, तो वह पकेगा ही नहीं। जब चावल पकेगा ही नहीं, तो भूख कैसे मिटेगी! भूख मिट नहीं सकती है, उस दाल-चावल को पकाना पड़ेगा। ऐसे ही हृदय में ज्ञान को जागृत करना पड़ेगा, तभी जीवन में आनंद आयेगा। इसीलिए प्रेमी सज्जनो, आप हरि के ऐसे द्वार में आए हैं, जिस द्वार में हमें सब कुछ दिख रहा है। यहाँ जन्म भी हो रहा है और जाने वाला जा भी रहा है। सब इसी भूमि में हो रहा है। सभी इसी भूमि से उत्पन्न होते हैं और इसी में मिल जाते हैं। अब आपको विचारना है कि हरिद्वार में आकर हमें क्या हासिल करना है-

रस्सी के बार-बार पत्थर पर जाने से निशान पड़ जाते हैं। ऐसे ही यदि हम बार-बार सत्संग में आते रहेंगे, तो हमारे जीवन में भी अवश्य बदलाव आएगा।

सकल पदार्थ हैं जग माहीं।
कर्म हीन नर पावत नाहीं।।

लेकिन, इतना कुछ देखने के बाद भी हमारी बुद्धि में सुधार नहीं होता है, तो फिर हमें धिक्कार है। कहा है कि-

करत करत अभ्यास के,
जड़मति होत सुजान।
रसरी आवत जात ते,
सिल पर परत निशान।।

रस्सी के बार-बार पत्थर पर जाने से निशान पड़ जाते हैं। ऐसे ही यदि हम बार-बार सत्संग में आते रहेंगे, तो हमारे जीवन में भी अवश्य बदलाव आएगा। कई लोग सत्संग सुनने के बाद भी वही संसार की नाशवान वस्तुओं को मांगते हैं, नाशवान वस्तुएं मांगी, तो क्या मांगा। हम लोग जब कल भक्तों से मिलेंगे, तो कोई कहता है कि मुझे बेटा दे दो, कोई कहता है कि बेटी दे दो, कोई कहता है कि मुझे धन दे दो, कोई कहता है कि मेरी शादी करा दो, मेरे बच्चे की शादी करा दो, ये सब सांसारिक चीजें हैं, जिसने उन्हें संसार में भेजा है, उनके लिए तो वह भगवान करेगा ही, ऐसी बात नहीं है कि नहीं करेगा। उसने जब संसार में भेजा है, तो सारी गारंटी उसकी है, वह तुम्हारे लिए सब कुछ करेगा । पर, वह एक प्रेम के बस में होता है। इसलिए उस एक परमात्मा से प्रेम करो, उससे भक्ति का दान मांगो। यह मत सोचो कि जो चला गया, वह तो स्वर्ग में बैठा होगा। वह तुम्हारी याद नहीं कर रहा, हम उनकी याद करते हैं। तो सोचो, विचारो और अध्यात्म ज्ञान को जानो, क्योंकि ज्ञान से बड़ी कोई भी पूंजी नहीं है। इसलिए कल भी सत्संग होगा और संत-महात्मा अपने विचार रखेंगे, किसके विचारों से किसको वैराग्य हो जाए, पता ही नहीं चलता। सत्संग का एक शब्द ही हमारे जीवन को बदल देता है।

तो प्रेमी सज्जनो, सुनो, समझो और विचारो और फिर कर्म में ढालो। डॉक्टर ने दवाई का पर्चा लिख दिया कि यह दवाई तुमने तीन बार लेनी है। और दवाई खरीद करके अलमारी में बंद कर दोगे, दवाई नहीं लोगे, तो क्या रोग हटेगा, कभी नहीं हट सकता। वह दवा लेनी पड़ेगी, खानी पड़ेगी, उसका नियमित रूप से सेवन करोगे, तब शरीर का रोग दूर हो सकता है। मन का रोग तो सबसे कठिन है। पर, पल भर में वह ठीक हो सकता है और वह हमारे गुरु महाराज जी ने अध्यात्म ज्ञान के द्वारा हम सबको वह शक्ति दी है, जिससे कि हम अपने दु:ख को दूर कर सकते हैं। सांसारिक दु:ख को दूर कर सकते हैं और अध्यात्म को अपना कर हम अपना जीवन धन्य बना सकते हैं। कल भी यहाँ सत्संग होगा। सबको दुआ आशीर्वाद।

GOD CAN BE RECOGNIZED ONLY THROUGH SELF-KNOWLEDGE

MATA SHRI MANGLA JI



Dear Premies, When Lord Ram, Lakshman, and Mata Sita embarked on their fourteen-year exile, Kevat (a boatman) ferried them across the river Ganga to help them continue their journey. As is customary, Kevat had to be paid, and all that Mata Sita had to give him, was the ring on her finger. Lord Ram offered it to Kevat as payment for his service. Kevat was a true devotee of Lord Ram and said he couldn't accept his payment since they were both in the same profession. He said, "I use this little boat to ferry people across this river, whereas you My Lord help people cross the ocean of life and death (bhavsagar). How can I, a mere boatman accept payment from you? If you still want to pay me for my service, then I only request you to ferry me across the bhavsagar".

It was with his devotion and humility that Kevat bound Lord Ram with love. That is why it is said that true devotion binds God to devotees. Most times we try and please God by offering things that we like, for instance food that we like to eat, etc. But how can God really be pleased? Only by meditating on the 'Holy Name'. The Almighty often takes human form for the welfare of mankind. We can only recognize God through Self-Knowledge (Atma-Gyan). That is why it is said-

Ram ek taapas tiya tari.
Nam koti khal kumati sudhari.

Lord Ram liberated one woman 'Ahilya' from her cursed state, but the Holy Name continues to redeem millions from the doom that ensues from their wickedness. Across the ages from Dwapar through Treta and going on to the present Kaliyug, Saints have saved mankind from the folly of sin by imparting the 'True Knowledge' of God. Lord Ram tells the people of Ayodhya-

Aurhoon ek sugupta mat, Sabahin kahaun kari jori.
Shankar bhajan bina nar, Bhagati na pawahin mori.

I will tell you a secret. Nobody can truly be my devotee unless he performs Shiva-meditation (Shankar bhajan).

Lord Ram tells the people of Ayodhya with folded hands to perform Shankar-bhajan. If chanting 'Ram-Ram' could help them attain salvation, then Lord Ram would have told his people to do so. Instead he said that without meditating on the eternal primordial vibration, which Lord Shiva meditates on himself (also known as Shankar Bhajan); no one can truly attain devotion to Lord Ram. Today there are innumerable claims to 'finding God'. Some say standing on one foot will help attain God, others claim that fasting for a certain number of days will do the trick, some others say holy pilgrimages are the ways to go. But Saint Kabirdasji reveals the key-

Tantra mantra sab jhuth hain, Mat bharmo sansar
Sar shabda jane bina, Koi na utarasi par

It means that chanting tantras and mantras couldn't be further from the truth, so don't wander and be fooled by all this. No one can cross the ocean of life and death without attaining the knowledge of the 'primordial word' which is the essence of life itself. So, what is this primordial word? What is the power of this 'Holy Name' that resides within Saints and robbers alike? Yet the two are not alike. What is the difference? The difference lies in 'thought' and 'deed' (or karm). Knowledge of the 'Holy Name' has turned dacoits into Saints. Only saints can take us from the path of folly to wisdom.

Once there was a thief that was caught. He was a special kind of thief that had donned the garb of a religious person. Since his appearance was saintly, people treated him with reverence. But his thoughts were base, and his actions deceptive. Therefore, it is said-

Bhesh dekh mat bhooliye, pooch lijiye gyan
Mol karo talwar ka, pari rahan do myan

Never judge a saint by his clothes, question his Spiritual Knowledge instead. Evaluate the sword, and not its sheath. They say this because anyone can pretend to be a saint by looking a certain way. But there is a big difference between a self-realized saint and a someone that doesn't possess true spiritual knowledge. Under the tutelage of a Spiritual Master a disciple learns

how to use his divine sight to go deep within. True Knowledge is what helps a disciple unite with God. That is why it is said-

Guru govind dou khare, kake lagun pay

Balihari guru apki, jin govind diyo lakhay

Whom should I prostrate first, when the Almighty and my Guru stand before me? I Kneel before the revered Guru first, since it is the Guru that revealed the Almighty to me.

The glory of a True Master is indescribable. The Guru takes an ignorant disciple, and with his teachings the disciple gains spiritual insight and becomes a 'Gyani' (one who knows the supreme truth). He leads one from the darkness of arrogance into the brilliance of truth. Lord Ram says, learn the secret of the primordial vibration and meditate on the true name of God. It is even written in the holy book of Ramayana that the 'Holy Name' is even greater than Lord Ram. If the mere utterance of the words Ram-Ram could bring salvation, then everyone would do so. Lord Krishna told Arjun in the battlefield that uttering Ram-Ram would get him salvation, but that was after he had imparted 'Self-Knowledge' to Arjun and made him realize his 'self' within. He told him that there was no greater mantra in the world, except the one for which Lord Shankar said-

Mahamantra jehi japat Maheshu, Kashi mukti hetu updeshu.

Lord Shiva meditated on the 'Primordial Word' or the 'Mahamantra', which he bequeaths on devotees (in Kashi) for their supreme liberation. He understood the power of this 'Mahamantra' or 'Holy Name' which is why he drank the poison (during samudra-manthan) and remained unharmed. So, what was this knowledge that the Lord imparted? We should think deeply about it. It is no ordinary mantra or chant, it is the one with which Lord Shankar made devotees realize the Supreme Almighty within themselves. Only meditating on the 'Mahamantra' can bring liberation.

We read a lot of worldly books which are rarely of any value, if we read our religious texts, and apply their knowledge practically in our daily lives, then it would be immensely beneficial to us. The Ramayana is one of the foremost works in all our religious scriptures. It essays the various roles and plays of the Lord beautifully. When reading in an unfamiliar language we often refer to a dictionary to understand the word meanings. Similarly, when you embark on the path of devotion, the Ramayan is one of the simplest works to start with. You can take any chapter and you will always find excellent teachings within. The book discusses the duties, and principles of a husband, a wife. It addresses questions like 'What is the life of a sadhu (yogi) like?', 'What should a disciple be like?' and many more. The Ramcharitmanas delves into the fundamentals and is applicable for every section of society. It is said–

Param prakash roop din rati, nahi chahiye kachhu diya ghrit bati

The 'Almighty God' or the 'Divine Light' shines day and night within the hearts of devotees. It doesn't need any external oil, lamp or wick. Worldly customs dictate that to appease 'God' a devotee needs to light a ghee-lamp every day, but how can a poor devotee that can't afford basic food accomplish this? However, a gyani (devotee that gains spiritual insight) knows the formless form of the Supreme, knows the 'Divine Light'. To know the 'Almighty' or 'Divine Light' or 'Noor-e-lahi' as referred to in the Holy Qoran, one must seek a True Master. Guru Nanak Dev ji said–

"AAP JAPE AURON KO JAPAWE, NANAK NISCHAY MUKTI PAWE."

If you remember 'The Holy Name' and inspire others to remember it too, then one will definitely attain liberation. Therefore, we must find out about this key to liberation (from life and death). We must please saints through service and devotion to gain this Spiritual Knowledge from them. When a child is born into the world, it is given a name as per the traditions of the culture it is born into. But we must consider what is that 'Name' which is known to the unborn child in the womb of his mother, that it constantly meditates upon to get out of the womb, and promises to remember it during its life on earth? The 'Holy Name' is soon forgotten under the influences of the world. It is the forgotten 'Holy Name' which the saints make us remember from time to time. They try to awaken one man at a time by imparting the secret knowledge of the 'Holy Name' that rests within us all. The occasion of Shri Hans ji Maharaj's Anniversary reminds us the importance of spreading the seeds of the 'Self-Knowledge' which he sowed. Great Saints endeavour only to help more and more people awaken through 'Self-Knowledge'. Souls that experience the bliss of this knowledge want others to be awaken from their unconscious sleep-like state in the material world. The aim of human life is not to merely enjoy worldly pleasures. Lord Ram and Lord Krishna also took human birth and went through motions of life and lived as householders. But the prime difference between these 'Great-Men' and the rest was they did not lose themselves in the rigmarole of their households. They had spiritual-insight and worked towards the benefit of all mankind. The rest were ignorant and remained caught up in the sustenance of their families. They merely earned their livelihoods, spent it, and lost the opportunity to liberation.

प्रभु श्री राम का भरत जी को उपदेश संत और असंत की पहचान

प्रस्तुत प्रसंग रामचरित मानस के उत्तरकांड से लिया गया है। इस प्रसंग में भरत जी प्रभु श्री राम जी से पूछते हैं कि संत और असंत कौन है और इनकी पहचान कैसे करें? प्रभु श्री राम ने उदाहरण सहित बड़ा ही सटीक उत्तर दिया, जो यहां प्रस्तुत है-

संत असंत भेद बिलगाई। प्रनतपाल मोहि कहहु बुझाई।।
संतन्ह के लच्छन सुनु भ्राता। अगनित श्रुति पुरान बिख्याता।।

हे शरणागत का पालन करने वाले प्रभु राम! संत और असंत के भेद अलग-अलग करके मुझको समझाकर कहिए। श्री राम जी ने कहा- भाई भरत! संतों के लक्षण और गुण असंख्य हैं, जो वेद और पुराणों में प्रसिद्ध हैं।

संत असंतन्हि कै असि करनी। जिमि कुठार चंदन आचरनी।।
काटइ परसु मलय सुनु भाई। निज गुन देइ सुगंध बसाई।।
ताते सुर सीसन्ह चढ़त जग बल्लभ श्रीखंड।
अनल दाहि पीटत घनहिं परसु बदन यह दंड।।

सुनो, संत और असंत की करनी ऐसी है, जैसे कुल्हाड़ी और चंदन का आचरण होता है। हे भरत! कुल्हाड़ी चंदन को काटती है; क्योंकि उसका स्वभाव या काम ही वृक्षों को काटना है, किंतु चंदन अपने स्वभाववश अपना गुण देकर उस काटने वाली कुल्हाड़ी को भी सुगंध से सुवासित कर देता है। इसी गुण के कारण चंदन देवताओं के सिरों पर चढ़ता है और जगत का प्रिय है और कुल्हाड़ी के मुख को यह दंड मिलता है कि उसको आग में जलाकर फिर घन से पीटते हैं।

विषय अलंपट सील गुनाकर।
पर दुख दुख सुख सुख देखे पर।।
सम अभूतरिपु बिमद बिरागी।
लोभामरष हरष भय त्यागी।।
कोमल चित दीनन्ह पर दाया।
मन बच क्रम मम भगति अमाया।।
सबहि मानप्रद आपु अमानी।
भरत प्रान सम मम ते प्रानी।।

संत विषयों में लिप्त नहीं होते, वे शील और सद्गुणों की खान होते हैं, उन्हें पराया दुःख देखकर दुःख और सुख देखकर सुख होता है। वे सबमें सर्वत्र, सब समय समता रखते हैं, उनके मन में कोई उनका शत्रु नहीं है। वे उन्मत्तता व विक्षिप्तता से रहित और वैराग्यवान होते हैं तथा लोभ, क्रोध, हर्ष और भय का त्याग किए हुए रहते हैं। उनका चित्त बड़ा कोमल होता है। वे दीनों पर दया करते हैं तथा मन, वचन और कर्म से मेरी निष्कपट विशुद्ध भक्ति करते हैं। सबको सम्मान देते हैं, पर स्वयं मानरहित होते हैं। हे भरत! वे प्राणी संतजन मेरे प्राणों



के समान हैं।

बिगत काम मम नाम परायन।
सांति बिरति बिनती मुदितायन।।
सीतलता सरलता मयत्री।
द्विज पद प्रीति धर्म जनयत्री।।
ए सब लच्छन बसहिं जासु उर।
जानेहु तात संत संतत फुर।।
सम दम नियम नीति नहिं डोलहिं।
पुरुष वचन कबहुँ नहिं बोलहिं।।
निंदा अस्तुति उभय सम, ममता मम पद कंज।
ते सज्जन मम प्रानप्रिय, गुन मंदिर सुख पुंज।।

हे भरत! संतों को कोई कामना नहीं होती। वे मेरे नाम के परायण होते हैं। वे शांति, वैराग्य, विनय और प्रसन्नता के घर होते हैं। उनमें शीतलता, सरलता सबके प्रति मित्रभाव और विप्रों के चरणों में प्रीति होती है, जो धर्मों को उत्पन्न करने वाली है। हे तात! ये सब लक्षण जिसके हृदय में बसते हों, उसको

सदा सच्चा संत जानो। जो शम- मन के निग्रह, दम- इन्द्रियों के निग्रह, नियम और नीति से कभी विचलित नहीं होते और मुख से कभी कठोर वचन नहीं बोलते। जिन्हें निंदा और स्तुति दोनों समान हैं और मेरे चरणकमलों में जिनकी ममता है, वे गुणों के धाम और सुख की राशि संतजन मुझे प्राणों के समान प्रिय हैं।

सुनहु असंतन्ह केर सुभाऊ।
भूलेहूँ संगति करिअ न काऊ।।
तिन्ह कर संग सदा दुखदाई।
जिमि कपिलहि घालइ हरहाई।।
खलन्ह हृदयँ अतत ताप बिसेषी।
जरहिं सदा पर संपत्ति देखी।।
जहँ कहूँ निंदा सुनहिं पराई।
हरषहिं मनहूँ परी निधि पाई।।

अब असंतों-दुष्टों का स्वभाव सुनो, भूलकर भी कभी उनकी संगति नहीं करनी चाहिए। उनका संग सदा दुःख देने वाला होता है, जैसे बुरी जाति की हरहाई गाय, कपिला जैसी सीधी और दुधारू गाय को अपने संग से नष्ट कर डालती है। दुष्टों के हृदय में बहुत अधिक संताप रहता है। वे पराई संपत्ति व सुख देखकर सदा जलते रहते हैं। वे कहीं भी दूसरे की निंदा सुनकर ऐसे हर्षित होते हैं, मानो रास्ते में पड़ी निधि या खजाना पा लिया हो।

काम क्रोध मद लोभ परायन।
निर्दय कपटी कुटिल मलायन।।
बयरु अकारन सब काहू सों।
जो कर हित अनहित ताहू सों।।
झूठइ लेना झूठइ देना।
झूठइ भोजन झूठ चबेना।।
बोलहिं मधुर बचन जिमि मोरा।
खाइ महा अहि हृदय कठोरा।।

वे काम, क्रोध, मद और लोभ के परायण तथा निर्दयी, कपटी, कुटिल और पापों के घर होते हैं। वे बिना ही कारण सब किसी से वैर किया करते हैं। जो भलाई करता है, उसके साथ भी बुराई करते हैं। उनका झूठ ही लेना और झूठ ही देना होता है। झूठ ही भोजन होता है और झूठ ही चबेना होता है। अर्थात वे लेन-देन के व्यवहार में झूठ का आश्रय लेकर दूसरों का अधिकार मार लेते हैं अथवा झूठी डींग हांका करते हैं कि हमने लाखों रुपये ले लिये करोड़ों का दान कर दिया। इसी प्रकार चने की रोटी खाते हैं और कहते हैं कि आज खूब माल खाकर आए अथवा चबेना चबाकर रह जाते हैं और कहते हैं कि हमें बढ़िया भोजन से वैराग्य है, इत्यादि। मतलब यह कि वे सभी बातों में झूठ ही बोला करते हैं। जैसे मोर साँपों को भी खा जाता है। वैसे ही वे भी ऊपर से मीठे वचन बोलते हैं, परन्तु हृदय के बड़े कठोर होते हैं।

पर द्रोही पर दार रत पर धन पर अपबाद।
ते नर पांवर पापमय देह धरें मनुजाद।।

वे दूसरों से द्रोह करते हैं और पराई स्त्री, पराए धन तथा पराई निंदा में आसक्त रहते हैं। वे पामर और पापमय मनुष्य नर शरीर धारण किए हुए राक्षस ही हैं।

लोभइ ओढ़न लोभइ डासन।
सिस्नोदर पर जमपुर त्रास न।।
काहू की जौं सुनहिं बड़ाई। स्वास लेहिं जनु जूड़ी आई।।
जब काहू कै देखहिं बिपती। सुखी भए मानहुँ जग नृपती।।
स्वारथ रत परिवार बिरोधी। लंपट काम लोभ अति क्रोधी।।

लोभ ही उनका ओढ़ना और लोभ ही बिछौना होता है। अर्थात वे सदा ही लोभ से घिरे हुए रहते हैं। वे पशुओं के समान आहार और मैथुन के ही परायण होते हैं, उन्हें यमपुर का भय नहीं लगता। यदि किसी की बड़ाई सुन पाते हैं, तो वे ऐसी दुःखभरी सांस लेते हैं, मानों उन्हें जूड़ी आ गई हो। और जब किसी की विपत्ति देखते हैं, तब ऐसे सुखी होते हैं मानो जगत भर के राजा हो गए हों। वे स्वार्थ परायण, परिवार वालों के विरोधी, काम और लोभ के कारण लंपट और अत्यंत क्रोधी होते हैं।

मातु पिता गुर बिप्र न मानहिं।
आपु गए अरु घालहिं आनहिं।।
करहिं मोह बस द्रोह परावा। संत संग हरि कथा न भावा।।
अवगुन सिंधु मंदमति कामी। बेद बिदूषक परधन स्वामी।।
बिप्र द्रोह पर द्रोह बिसेषा। दंभ कपट जियँ धरें सुबेषा।।

वे माता, पिता, गुरु और ब्राह्मण किसी को नहीं मानते। आप तो नष्ट हुए ही रहते हैं, साथ ही अपने संग से दूसरों को भी नष्ट करते हैं। मोहवश दूसरों से द्रोह करते हैं। उन्हें न संतों का संग अच्छा लगता है, न भगवान की कथा ही सुहाती है। वे अवगुणों के समुद्र, मंद-बुद्धि, कामी रागयुक्त, वेदों के निंदक और जबरदस्ती पराए धन के स्वामी या लूटने वाले होते हैं। वे दूसरों से द्रोह तो करते ही हैं, परंतु खास तौर से ब्राह्मण द्रोह करते हैं। उनके हृदय में दम्भ और कपट भरा रहता है, परन्तु वे ऊपर से सुंदर वेश धारण किए रहते हैं।

ऐसे अधम मनुज खल कृतजुग त्रेताँ नाहिं।
द्वापर कछुक बृंद बहुत होइहहिं कलिजुग माहिं।।

ऐसे नीच और दुष्ट मनुष्य सतयुग और त्रेता में नहीं होते। द्वापर में थोड़े से होंगे और कलियुग में तो इनके झुंड के झुंड होंगे। प्रभु श्री राम ने बड़े ही सटीक ढंग से उदाहरण सहित संत और असंत का वर्णन किया है, जिसे पढ़-समझकर मनुष्य को सदैव संतों की ही संगति करनी चाहिए; क्योंकि संत-सद्गुरु ही मनुष्य के वास्तविक हितैषी हैं। ■

पंचानन शिव, पंचमहाभूत और पर्यावरणीय चेतना का सनातन संदेश

सनातन धर्म में महाशिवरात्रि केवल एक पर्व नहीं, बल्कि चेतना के उत्कर्ष का महापर्व है। यह रात्रि अज्ञान से ज्ञान की, तमस से प्रकाश की और जड़ता से जागृति की ओर यात्रा की प्रतीक है। शिव को **'आदियोगी'** कहा गया है- वे न केवल देवताओं के देव होने के कारण महादेव हैं, बल्कि सृष्टि के संतुलनकर्ता, विनाश और पुनर्सृजन के सूत्रधार भी हैं। महाशिवरात्रि पर्व के माध्यम से शिव-तत्त्व को समझना वास्तव में प्रकृति, मानव और ब्रह्मांड के गहरे संबंध को समझना है।



शिव को पंचानन- अर्थात पाँच मुखों वाले देव के नाम से भी पुकारा गया है। ये पाँच मुख केवल प्रतीक नहीं, बल्कि ब्रह्मांडीय सत्य के पाँच आयाम हैं। शास्त्रों में इन्हें इस प्रकार बताया गया है:

ईशान- आकाश तत्व, ज्ञान और मोक्ष का प्रतीक
तत्पुरुष- वायु तत्व, जीवन-शक्ति (प्राण) का द्योतक
अघोर- अग्नि तत्व, परिवर्तन और ऊर्जा का स्रोत
वामदेव- जल तत्व, करुणा और संवेदना का रूप
सद्योजात- पृथ्वी तत्व, स्थिरता और धैर्य का आधार

तैत्तिरीय आरण्यक में स्पष्ट वर्णित किया गया है: **ईशानः सर्वविद्यानाम् ईश्वरः सर्वभूतानाम्** अर्थात ईशान शिव समस्त विद्याओं और समस्त प्राणियों के स्वामी हैं। पंचानन शिव वास्तव में उन पंच-महाभूतों के अधिष्ठाता हैं, जिनसे सृष्टि का निर्माण हुआ है। पंचमहाभूत- पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश के बिना जीवन की कल्पना असंभव है। मानव शरीर भी इन्हीं तत्वों से बना है। छांदोग्य उपनिषद में कहा गया है- **सर्वं खल्विदं ब्रह्म।** अर्थात यह संपूर्ण जगत ब्रह्म ही है। शिव का अर्थ ही कल्याण है। जब मानव पंच-महाभूतों के साथ संतुलन बनाकर चलता है, तभी जीवन में कल्याण संभव होता है।

महाशिवरात्रि से जुड़ी अनेक पौराणिक कथाएँ हैं। लिंगोद्भव की कथा के अनुसार ब्रह्मा और विष्णु के बीच श्रेष्ठता का विवाद हुआ, तो शिव अनंत ज्योतिर्लिंग के रूप में प्रकट हुए। यह कथा अहंकार के विसर्जन और सत्य की खोज में संलग्न होने का संदेश देती है। समुद्र मंथन के समय निकले हलाहल विष को शिव ने ग्रहण कर कंठ में धारण किया, जिससे वे नीलकंठ कहलाए। यह कथा त्याग, करुणा और पर्यावरणीय संतुलन का प्रतीक है, जहाँ शिव विष को पीकर सृष्टि

को बचाते हैं।

महाशिवरात्रि पर्व पर व्रत, जागरण और अभिषेक का विशेष महत्व है। जल, दूध, बेलपत्र, भस्म और धतूरा ये सभी प्रकृति के तत्व हैं। स्कंद पुराण में कहा गया है- **बिल्वपत्रैश्च पूजितः शिवः प्रीयते नित्यशः।** अर्थात बेलपत्र से पूजित शिव सदा प्रसन्न होते हैं। बेलपत्र त्रिदल वाला होता है, जो त्रिगुण (सत्व, रज, तम) के संतुलन का प्रतीक है।



आज का मानव भौतिक प्रगति में तो आगे बढ़ा है, किंतु प्रकृति से दूर होता जा रहा है। पंचानन शिव हमें स्मरण कराते हैं कि पंच-महाभूतों के असंतुलन से ही पर्यावरण संकट उत्पन्न हुआ है। जल प्रदूषण, वायु प्रदूषण, भूमि क्षरण ये सभी शिव-तत्त्व से विमुखता के परिणाम हैं। अथर्ववेद में पृथ्वी की स्तुति करते हुए कहा गया है- **माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः।** अर्थात पृथ्वी हमारी माता है और हम उसके पुत्र हैं। यह भाव पर्यावरण संरक्षण की मूल भावना है। शिव कैलाश पर वास करते हैं। हिमालय पर्यावरण संतुलन का केंद्र है। गंगा शिव की जटाओं से प्रवाहित होती हैं, जो जल संरक्षण का प्रतीक हैं। नाग, भस्म और वृक्ष ये सभी जैव-विविधता के संकेत हैं। शिव का जीवन स्वयं प्रकृति के साथ सह-अस्तित्व का आदर्श है। इस प्रकार महाशिवरात्रि पर्व का यह स्पष्ट संदेश है कि जब मानव पंच-महाभूतों का सम्मान करेगा, तभी जीवन सुरक्षित रहेगा। शिव की आराधना का अर्थ केवल पूजा नहीं, बल्कि प्रकृति की रक्षा में अपनी सहभागिता सुनिश्चित करने का संकल्प लेना है।

इतना ही नहीं, महाशिवरात्रि हमें आत्मचिंतन, संयम और संतुलन का मार्ग दिखाती है। पंचानन शिव के माध्यम से पंच-महाभूतों का सम्मान करना ही सच्ची शिव-भक्ति है। आधुनिक युग में यह पर्व हमें पर्यावरण संरक्षण, सामाजिक समरसता और आध्यात्मिक जागृति का स्पष्ट संदेश देता है।

वर्तमान समय में हमारे समक्ष श्री भोले जी महाराज न केवल अपने प्रवचनों से लोगों को वास्तविक शिव-तत्व का व्यावहारिक ज्ञान करा कर आध्यात्मिक पथ पर अग्रसर होने का संदेश देते हैं, बल्कि मानवता की सेवा में बढ़-चढ़ कर भागीदार बनने की भी प्रेरणा प्रदान करते रहते हैं।

महाशिवरात्रि पर्व हमें भगवान शिव के साधनामय स्वरूप से यह प्रेरणा प्रदान करता है कि आखिर देवाधिदेव शिव पद्मासन में बैठ नेत्र बंद कर क्या कर रहे है अर्थात किसका ध्यान कर रहे हैं। हमें भी इस रहस्य को जानना और समझना चाहिए।

शिव को आदि गुरु, आदि देव और योगेश्वर कहा गया है। वे गुरु रूप में किस ईश्वर का बोध करा रहे हैं; अथवा ध्यानावस्था में बैठे वे किस ईश्वर का ध्यान करने की प्रेरणा दे रहे हैं; इस रहस्य को प्रत्येक शिव भक्त को व्यावहारिक रूप से जानने व समझने की जरूरत है, तभी सही अर्थों में महाशिव रात्रि पर्व मनाना सार्थक व सफल होगा। ■

संत रविदास : समरस समाज और आध्यात्मिक चेतना के अग्रदूत

संत रविदास भारतीय संत-परंपरा के ऐसे तेजस्वी नक्षत्र हैं, जिनकी वाणी में करुणा, समता और आत्मबोध का अद्भुत समन्वय है। वे भक्ति आंदोलन के उन संतों में से हैं, जिन्होंने जाति, वर्ग और बाह्य-आडंबरों का खंडन कर मानव-मात्र की एकता का संदेश दिया। संत रविदास का जीवन चरित्र और उनकी वाणी के संकलन की रचनाओं के संदेश भी आज की आधुनिक युवा पीढ़ी के लिए एक सशक्त मार्गदर्शन हैं। संत रविदास का जन्म काशी के निकट एक साधारण परिवार में हुआ। वे पेशे से चर्मकार थे, किंतु उनकी चेतना अत्यंत उच्च थी। उन्होंने सिद्ध किया कि आध्यात्मिकता किसी जाति या वर्ग की बपौती नहीं है। उनका जीवन स्वयं एक संदेश है कि श्रम, साधना और सत्य के माध्यम से मनुष्य परमात्मा तक पहुँच सकता है। संत रविदास की रचनाओं में सरल भाषा में गहरे आध्यात्मिक सत्य निहित हैं। उनका प्रसिद्ध पद है: **मन चंगा तो कठौती में गंगा**: अर्थात यदि मन शुद्ध है, तो किसी बाह्य तीर्थ की आवश्यकता नहीं। यह संदेश आज की युवा पीढ़ी को आत्म-शुद्धि और आंतरिक नैतिकता का मार्ग दिखाता है। संत रविदास की सबसे प्रसिद्ध अवधारणा है- **बेगमपुरा शहर का नाउँ, दुख अंदोह नहिं तिहि ठाँउ** अर्थात बेगमपुरा ऐसा नगर है, जहाँ न दु:ख है, न भय, न भेदभाव। यह एक आदर्श समाज की कल्पना है, जहाँ समता और न्याय का राज है। उनकी यह संकल्पना आधुनिक संविधानिक मूल्यों समानता, स्वतंत्रता और बंधुत्व से भी मेल खाती है।



संत रविदास ने समाज को बाँटने वाली दीवारों को तोड़ा। उनकी भक्ति में मानवता सर्वोपरि है। वे कहते हैं: **जाति-पाँति पूछै नहिं कोई। हरि को भजै सो हरि का होई।।** अर्थात ईश्वर जाति नहीं पूछता, जो उसे भजता है, वही उसका होता है। आज के समाज के लिए यह संदेश अत्यंत प्रासंगिक है, जहाँ सामाजिक विभाजन एक बड़ी चुनौती है। आज का मानव समाज भौतिक सफलता की दौड़ में मानसिक तनाव से घिर गया है। संत रविदास की वाणी आत्मिक संतुलन सिखाती है। वे आत्मसम्मान, श्रम की गरिमा और करुणा का पाठ पढ़ाते हैं। उनकी भक्ति पलायन नहीं सिखाती, बल्कि समाज के बीच रहकर आत्मोन्नति के मार्ग पर चलने को ही भक्ति बताती है। संत रविदास ने भक्ति आंदोलन में निर्गुण भक्ति को सशक्त स्वर दिया है। उनकी रचनाओं को गुरु ग्रंथ साहिब में भी संकलित किया गया है जो उनकी सार्वकालिक महत्ता को दर्शाता है। उनकी वाणी में राम, हरि और प्रभु सभी एक ही ब्रह्म के नाम हैं। यह समन्वयात्मक दृष्टि धार्मिक सौहार्द का आधार है। संत रविदास केवल एक संत नहीं, बल्कि सामाजिक क्रांति के अग्रदूत हैं। उनकी वाणी आज भी उतनी ही प्रासंगिक है जितनी उनके समय में थी।

रविदास जयंती के पुनीत अवसर पर उनकी वाणियां हमें आंतरिक शुद्धि और सामाजिक समरसता की चेतना का पावन संदेश देती हैं। साथ ही स्पष्ट करती है कि वे समरस समाज और आध्यात्मिक चेतना के अग्रदूत के रूप में आज भी पूरी तरह प्रासंगिक व उपयोगी हैं। ■

चार प्रकार की वाणी

वाणी चार प्रकार की होती है- परा, पश्यंती, मध्यमा और वैखरी; जो वाणी के सूक्ष्म से स्थूल रूप तक के क्रम को दर्शाती है; परा सबसे सूक्ष्म और दिव्य है, जबकि वैखरी सबसे स्थूल और दैनिक बोलचाल की भाषा है, जिसे हम सुनते और बोलते हैं, जिसमें से तीन **"परा, पश्यंती, मध्यमा"** शरीर के भीतर गुप्त रहती हैं और चौथी वैखरी वाणी ही बाहर व्यक्त होती है। वाणी से न केवल हमारी बातचीत का तरीका समझ आता है, बल्कि हमारी आध्यात्मिक स्थिति का भी पता चलता है। सामान्य लोग पहले दो स्तर पर रहते हैं, लेकिन गहन साधक तीसरे और चौथे स्तर का अनुभव कर पाते हैं। यह यात्रा हमें बताती है कि असली वाणी सिर्फ बोले गए शब्द नहीं, बल्कि हमारे भीतर की गहराई से उठती हुई चेतना की ध्वनि है।



1. परा वाणी- यह वाणी का सबसे सूक्ष्म और मूल रूप है, जो चेतना के स्तर पर होता है। यह मूलाधार चक्र से उत्पन्न होती है और निर्विचार की अवस्था में या गहरी चेतना में महसूस होती है, जो दिव्य ऊर्जा का संचार करती है। यह न शब्दों में होती है, न मन और इंद्रियों से समझी जा सकती है। यह आत्मा और परमात्मा की सीधी वाणी है, जिसे केवल साधना और आत्म-साक्षात्कार के बाद ही अनुभव किया जा सकता है।

2. पश्यंती वाणी- यह वाणी हृदय-चक्र यानी अनाहत चक्र से जुड़ी है और विचारों के जन्म लेने का स्थान है। यह प्रेम, करुणा या गहन भावनाओं के समय महसूस होती है, जहां विचार अभी शब्द नहीं बने होते। जैसे, जब दिल में कोई अनुभूति होती है; पर हम उसे बोल नहीं पाते। यह हृदय की गहराई में गूंजने वाली वाणी है। इसे 'अनहद नाद' भी कहते हैं, जिसे केवल अनुभव किया जा सकता है। **'पश्यंती'** शब्द का अर्थ है, जो दिखाई दे। यानी इस स्तर पर वाणी भाव के रूप में प्रकट होती है।

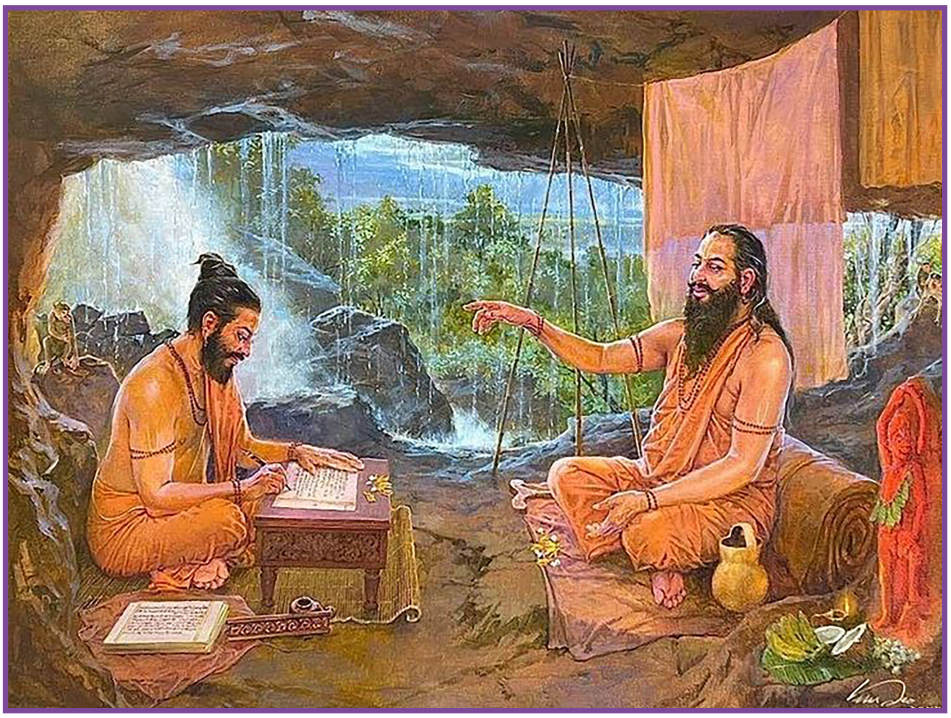
3. मध्यमा वाणी- यह कंठ यानी विशुद्ध-चक्र से उत्पन्न होती है और विचारों को भाषा में बदलने की प्रक्रिया है। यह सोचने-समझने के बाद बोली जाने वाली भाषा है, जैसे किसी सवाल का जवाब देना या गहरी बात करना, इसे गुनगुनाना या मन में दोहराना भी कहा जा सकता। जब हम किसी बात को बोलने से पहले सोचते हैं, तो वह प्रक्रिया मध्यमा वाणी कहलाती है। इसमें विचार और उनके अर्थ मन में बनते हैं। जैसे हम बोलने से पहले मन ही मन वाक्य गढ़ते हैं। इसे बाहरी दुनिया सीधे नहीं सुन सकती, लेकिन हमारे मन में यह लगातार चलती रहती है।

4. वैखरी वाणी- यह वाणी का सबसे स्थूल और बाहरी रूप है, जिसे हम मुँह से बोलते हैं और कानों से सुनते हैं। यह जीभ, तालु, दांत आदि से उच्चारित होती है और दैनिक व्यवहार में बोलचाल के लिए उपयोग की जाती है। यह वाणी का सबसे साधारण और बाहरी रूप है। इसमें वे शब्द आते हैं, जिन्हें हम बोलकर या सुनकर व्यक्त करते हैं। नित्य-प्रतिदिन का संवाद, भाषण, पढ़ाई, लिखाई, गीत आदि सब वैखरी वाणी का हिस्सा हैं। इसे सब लोग समझ सकते हैं; क्योंकि यह पूरी तरह प्रकट रूप में होती है।

संक्षेप में इसके चार चरण हैं- मूलाधार से उत्पन्न परा, हृदय से पश्यंती, कंठ में मध्यमा और मुख से निकलने वाली वैखरी वाणी। ■

जन्म है दुःख का मूल और शोक का सागर

स्वामी समर्थ रामदास जी अपने ग्रंथ दासबोध में जीव के जन्म का निरूपण करते हुए कहते हैं कि जन्म ही दुःख का मूल, शोक का सागर और भय का अचल पर्वत है। जन्म ही कर्मों का ढाँचा, पातकों की खान और काल की नित्य नई होने वाली यातना है। यह जन्म ही कुविद्या का फल, लोभ का कमल और ज्ञानहीन भ्रान्ति उत्पन्न करने वाला परदा है। जन्म ही जीव के लिए बन्धन, मृत्यु का कारण और लोगों को व्यर्थ फंसाने वाला है। जन्म ही सुख का विस्मरण, चिन्ता का सागर और वासना का विस्तृत रूप है। जन्म ही जीव की अवदशा, कल्पना का लक्षण और ममतारूपी डाकिनी का जंजाल है। जन्म ही माया का कपट-जाल, क्रोध का शौर्य और मोक्ष में बाधा देने वाला विघ्न है। जन्म ही जीव का ममत्व, अहंता का गुण और ईश्वर का विस्मरण कराने वाला है। जन्म ही विषयों का प्रेम, दुराशा की बेड़ी और काल द्वारा खाई जाने वाली ककड़ी है। जन्म ही विषम काल, विकट समय और अत्यन्त घृणित नरकरूप पतन है। यदि उसका मूल देखा जाय तो उसके समान अमंगल और कोई पदार्थ नहीं है। रजस्वला के रज से इसका जन्म होता है। रजस्वला का अत्यन्त दोष जो रज है, उसी का यह पुतला है। फिर वहाँ निर्मलता की क्या बात हो सकती है? रजस्वला के रज के एकत्र होने से जो एक बुलबुला बनता है, उसी से यह शरीर उत्पन्न होता है। ऊपर से देखने में यह बहुत सुन्दर होता है, पर अन्दर से नरक की गठड़ी है। मानो ऐसे चर्मकुंड का ढकना है, जिसे कभी खोलना ही नहीं चाहिए। कुंड धोने से शुद्ध हो जाता है; पर यह शरीर नित्य प्रति धोया जाता है, तो भी इसमें दुर्गन्ध ही आती है और यह शुद्ध नहीं होता। अस्थि-पंजर खड़ा किया, उसमें शिराएं और नाड़ियां लगा दीं और उसकी सन्धियों में मेद-मांस भर दिया। बस, शरीर बन गया।



जिस अशुद्ध रक्त का नाम भी शुद्ध नहीं है, वही इस शरीर में भरा हुआ है। तिस पर अनेक प्रकार के रोग और दुःख भी इसी में बसते हैं। यह गन्दी वस्तुओं से भरा हुआ नरक का भंडार है और इसमें दुर्गन्धित मल-मूत्र भरा हुआ पड़ा है। इसके अन्दर अनेक प्रकार के कीड़े-मकोड़े और आंतें भरी हैं और जगह-जगह दुर्गन्ध-युक्त वस्तुओं की पोटलियाँ बंधी रखी हैं। सारे शरीर में सिर सबसे अच्छा समझा जाता है, पर उसमें भी नाक और मुँह से थूक और कफ बहता है। कान के बहने से जो दुर्गन्धि निकलती है, वह सही नहीं जाती। आंखों और नाक में मल जम जाता है और प्रातःकाल मुँह में से मल के समान गन्ध निकलती है। जिस मुँह में लार, थूक, मल, पित्त और कफ भरा रहता है, उसी को चन्द्रमा के समान मुख-कमल कहते हैं। इधर मुँह में तो यह गन्दगी भरी है और उधर पेट में विष्टा भरी है। यह बात बिलकुल प्रत्यक्ष है और संसार में प्रत्यक्ष के लिए प्रमाण की आवश्यकता नहीं होती। पेट में तो दिव्य अन्न डाला जाता है; पर उसका कुछ अंश विष्टा हो जाता है और कुछ वमन। भागीरथी का जो जल पीया जाता है, वह लघु शंका बन जाता है। इस प्रकार यह मल, मूत्र और वमन ही इस शरीर का जीवन है,

और इसमें कोई सन्देह नहीं कि इन्हीं से शरीर बढ़ता है। यदि पेट में मल, मूत्र और वमन न होता तो सब लोग मर जाते। चाहे राजा हो या रंक, विष्टा सबके पेट में है। इस शरीर की ऐसी व्यवस्था है कि यदि सफाई करने के लिए इसके अन्दर की गन्दगी निकाल दी जाय तो यह शरीर ही न रह जाय। जब अच्छे होने के समय शरीर की यह दशा है, तो फिर दुर्दशा होने पर उसका जो हाल होता है, वह कहा ही नहीं जा सकता। अनेक प्रकार की विपत्तियां सहकर इसे नौ मास तक कारागार में बन्द रहना पड़ता है,



नवों द्वार रुके रहते हैं और उसमें वायु का कहीं से प्रवेश नहीं होता। वहीं वमन और नरक के रस जठराग्नि के द्वारा तपते हैं और उसी में अस्थि और मांस खौलता रहता है। जब बिना त्वचा का गर्भ खौलता है, तब माता को कै करने की इच्छा होती है और कटु तथा तीक्ष्ण रसों के कारण उस बालक के सब अंग तप जाते हैं। जहाँ यह चमड़े की पोटली बंधी रहती है, वहाँ विष्टा की भी थैली रहती है और वहीं से वंकनाल के द्वारा गर्भस्थ बालक को रस पहुँचता है। वहाँ विष्टा, मूत्र, वमन, पित्त और नाक तथा मुँह से निकलने वाले जन्तुओं के कारण बालक बहुत ही घबराता है।

बस इसी प्रकार के कारागार में प्राणी बड़े कष्टों में पड़ा रहता और बहुत ही दुःखी होकर भगवान से प्रार्थना करता है कि अब यहाँ से मेरा छुटकारा करो। यदि इस बार तुम मुझे यहाँ से निकाल दोगे, तो मैं अपना वास्तविक हित करूंगा और ऐसा प्रयत्न करूंगा जिससे इस गर्भवास का अन्त हो जाय; और मुझे फिर यहाँ न आना पड़े। जब इस प्रकार दुःखी होकर प्रतिज्ञा की जाती है, तब जन्म का समय आता है। उस समय माता प्रसव पीड़ा से रोने लगती है। गर्भ में तो बालक की नाक और मुँह मांस से बन्द रहता है और वह केवल मस्तक के द्वारा सांस लेता है। पर जन्म के समय वह मस्तक वाला द्वार भी बन्द हो जाता है, जिससे प्राणी व्याकुल होकर चारों ओर छटपटाने लगता है। श्वास बन्द होने से उसे बहुत कष्ट होता है और मार्ग न दिखाई पड़ने से वह और भी दुःखी होता है। इसी व्याकुलता में यदि कहीं वह माता की योनि में ही अटक जाता है, तो लोग कहते हैं कि इसे काटकर निकालो। तब लोग उसके हाथ पैर काटकर उसे बाहर निकालते हैं। अथवा मुँह, नाक, पेट जो कुछ सामने आता है, वही काट डालते हैं। इस प्रकार टुकड़े-टुकड़े करने से बालक मर जाता है और माता भी मर जाती है। इस प्रकार पहले तो वह गर्भ में दारुण दुःख भोगता है और तब स्वयं भी मरता है और माता के भी प्राण लेता है। यदि सौभाग्य से किसी तरह योनि का मार्ग मिल गया, तो कन्धा या गला अड़ जाता है। जब लोग उस संकुचित मार्ग से बलपूर्वक उसे खींचकर निकालते हैं, जिससे कभी-कभी बालक के प्राण निकल जाते हैं। मरने से पहले ही बालक बेहोश हो जाता है और वह पहले की सब बातें भूल जाता है।

गर्भ में रहने पर तो बालक **"सोहं सोहं"** कहता है, अर्थात मैं वही ब्रह्म हूँ, पर बाहर निकलते ही कहने लगता है- **"कोहं-कोहं"** अर्थात मैं कौन हूँ। इस प्रकार गर्भ में बहुत से कष्ट भोगने पड़ते हैं। गर्भ के कष्ट भोगकर वह बहुत कठिनता से बाहर निकलता है और यहाँ आते ही गर्भ-वास के सब कष्ट भूल जाता है। उसकी वृत्ति बिलकुल शून्य हो जाती है, उसे कुछ भी याद नहीं रहता और अज्ञान से जो भ्रान्ति उत्पन्न होती है, उसी को वह सुख मान बैठता है। देह-विकार पाते ही वह माया जाल में ऐसा फंसता है कि उसे सब दुःख भूल जाते हैं। प्राणी मात्र को गर्भ में इसी प्रकार के दुःख होते हैं, इसीलिए हम कहते हैं कि परमात्मा की शरण में जाना चाहिए। जो परमात्मा का भक्त होता है, वह अपने ज्ञान बल से जन्म से ही मुक्त और सदा विरक्त रहता है। ■

प्रेरक प्रसंग

पिघलना सीख लो

सूफी संत मौलाना जलालुद्दीन रूमी के पास एक युवा साधक आत्मज्ञान की तलाश में पहुँचा। उसने रूमी से कहा, 'मैं ईश्वर को पाना चाहता हूँ। लेकिन, जब भी ध्यान लगाता हूँ, मेरा मन भटकने लगता है, क्रोध आ जाता है, वासना जाग उठती है, कभी पुराने मोह खींचने लगते हैं। क्या ईश्वर मुझसे बहुत दूर है?' रूमी ने अपने शिष्य से जलता हुआ दीपक मंगवाया और युवक से कहा, 'इस दीपक को ध्यान से देखो। इसकी लौ प्रकाश दे रही है, शांति फैला रही है। तुम अपनी उंगली इसमें डालोगे, तो क्या होगा?' युवक ने तुरंत जवाब दिया, 'मैं जल जाऊँगा' रूमी ने पूछा, 'तो फिर क्या तुम यह कहोगे कि लौ बुरी है?' युवक चुप रहा। रूमी ने अपनी बात आगे बढ़ाई, 'यही बात जीवन और ईश्वर के साथ है। ईश्वर की उपस्थिति लौ की तरह है, बिलकुल शुद्ध, शांत, उज्ज्वल; लेकिन जब तक तुम अपने अहंकार की उंगली लेकर उसके पास जाओगे, तो जलते रहोगे। यदि सच में ईश्वर को पाना है, तो मोम बनो। पिघल जाओ, विनम्र हो जाओ। तब वही लौ तुम्हें अपनाएगी, तुम्हें आलिंगन देगी।' युवक इस मर्म को समझ चुका था। इस प्रसंग का यही अभिप्राय है कि ईश्वर को पाने के लिए हमें अपने आपको शुद्ध, सात्विक और विनम्र बनाना होगा, यही साधना है। ऐसी अवस्था में ही हम परमात्मा को प्राप्त कर सकेंगे। ■

शिव भोला भंडारी साधो, शिव भोला भंडारी रे

शिव भोला भंडारी साधो, शिव भोला भंडारी रे।। टेक।।

भस्मासुर ने करी तपस्या, वर दीना त्रिपुरारी रे।

जिसके सिर पर हाथ लगावे, भस्म होय तन सारी रे।।

शिव भोला भंडारी साधो, शिव भोला भंडारी रे।। 1।।

शिव के सिर पर हाथ धरन की, मन में दुष्ट विचारी रे।

भागे फिरत चहुँ दिश शंकर, लगा दैत्य डर भारी रे।।

शिव भोला भंडारी साधो, शिव भोला भंडारी रे।। 2।।

गिरजा रूप धार हरि बोले, बात असुर से प्यारी रे।

जो तूं मुझको नाच दिखावे, होवुं नार तुमारी रे।।

शिव भोला भंडारी साधो, शिव भोला भंडारी रे।। 3।।

नाच करत अपने सिर कर धर, भस्म भयो मतिमारी रे।

ब्रह्मानंद देत जोई मांगे, शिव भक्तन हितकारी रे।।

शिव भोला भंडारी साधो, शिव भोला भंडारी रे।। 4।।

परमाराध्या माताश्री राजेश्वरी देवी की जयंती 'मातृ शक्ति दिवस' के सुअवसर पर

विशाल जनकल्याण समारोह

आप सभी प्रेमी भक्तों को अत्यन्त हर्ष के साथ सूचित किया जाता है कि परमाराध्या माताश्री राजेश्वरी देवी जी की जयंती **"मातृ शक्ति दिवस"** के सुअवसर पर 4 व 5 अप्रैल, 2026 (शनिवार एवं रविवार) को श्री हंसलोक आश्रम, भाटी, नई दिल्ली में **'विशाल जनकल्याण समारोह'** आयोजित किया जाएगा। **परमपूज्य श्री भोले जी महाराज** एवं **डॉ. माताश्री मंगला जी** इस समारोह के मुख्य अतिथि एवं वक्ता होंगे। इसके साथ ही अनेक विद्वानों, बुद्धिजीवियों, समाज सुधारकों तथा महात्मागण के उद्बोधन के अलावा प्रसिद्ध संगीतकारों एवं गायकों द्वारा भजन-संगीत तथा सांस्कृतिक कार्यक्रमों की प्रस्तुति की जाएगी। इस सुअवसर पर जिज्ञासुओं को आत्मज्ञान का व्यावहारिक बोध भी कराया जाएगा।



अत: आप अपने क्षेत्र से अधिक से अधिक प्रेमी भक्तों, जिज्ञासुओं एवं श्रद्धालुओं के साथ सपरिवार पधारकर आत्म लाभ अवश्य प्राप्त करें।

कार्यक्रम निम्नानुसार है-

4 अप्रैल को सायं 6 से रात्रि 9 बजे तक प्रवचन एवं भजन-संगीत

5 अप्रैल को सायं 6 से रात्रि 9 बजे तक प्रवचन एवं भजन-संगीत

स्थान- श्री हंसलोक आश्रम, बी-18, भाटी माइंस रोड,
भाटी, छतरपुर, नई दिल्ली-110074

निवेदक- **हंसज्योति (ए यूनिट ऑफ हंस कल्चरल सेंटर),** नई दिल्ली
संपर्क- 8800291788, 8800291288

इस जनकल्याण समारोह का सीधा प्रसारण हंसलोक T.V. पर दोनों दिन सायं 6 से रात्रि 9 बजे तक किया जायेगा।

www.youtube.com/@hanslokTV
https://www.facebook.com/Hanslok

-: पत्रिका संबंधी सूचना :-

सभी आदरणीय महात्मा/बाईगण एवं प्रचारकों से निवेदन है कि आप अपने क्षेत्र में अध्यात्म-ज्ञान के प्रचार-प्रसार हेतु **"हंसलोक संदेश"** पत्रिका को अधिक से अधिक प्रेमी-भक्तों एवं अध्यात्मज्ञान पिपासुओं तक पहुँचायें। पत्रिका के माध्यम से आपको हर माह परमपूज्य श्री भोले जी महाराज एवं डॉ. माताश्री मंगला जी के देशभर में आयोजित जनकल्याण समारोहों में दिए गए प्रवचनों को पढ़ने का सौभाग्य प्राप्त होगा। साथ ही समारोहों के सुन्दर चित्र और विस्तृत विवरण भी पढ़ने को मिलेगा। इसके अलावा संस्थागत आध्यात्मिक, सांस्कृतिक एवं जनकल्याण से सबंधित गतिविधियों की सूचना व समाचार भी मिलेंगे। इसलिए प्रत्येक प्रेमी परिवार में नियमित रूप से पत्रिका अवश्य मंगाई जाए।

डाक से पत्रिका की सुलभ प्राप्ति के लिए गाँव/क्षेत्र के सभी प्रेमी भक्त एक साथ किसी एक प्रेमी-भक्त के नाम व पते पर पत्रिकाएं बंडल रूप में मंगवा सकते हैं।

नोटः- (1) हंसलोक संदेश पत्रिका की रसीद काटते समय रसीद पर पाठक का पैन नम्बर, आधार नम्बर तथा मोबाइल नम्बर अवश्य लिखें।

(2) पत्रिका की एक रसीद (पर्ची) 100/- रुपये से अधिक की न काटी जाए।

(3) पत्रिका के लिए मनीआर्डर भेजते समय अपना पैन नम्बर, आधार नम्बर और मोबाइल नम्बर अवश्य लिखें।

(4) यदि आप एक से अधिक पत्रिकाएं बंडल के रूप में मंगाना चाहते हैं तो मो.नं-9038675826 पर संपर्क कर पूरी जानकारी प्राप्त कर सकते हैं।

एक प्रति मूल्य- रु.10/-

हंसलोक संदेश पत्रिका मंगाने का पताः-

कार्यालय - हंसलोक संदेश

श्री हंसलोक आश्रम, बी-18, भाटी माइंस रोड, भाटी, छतरपुर,
नई दिल्ली-110074 संपर्क सूत्र- 8860671326

विशेषः- पत्रिका संबंधी अपने अमूल्य सुझावों से हमें अवगत कराते रहें। आपके सुझाव हमारे लिए मार्गदर्शन का कार्य करेंगे। **-सम्पादक**

फरवरी, 2026 के पर्व-त्योहार

- 1 फरवरी रविवार- माघ पूर्णिमा, गुरु रविदास जयंती
- 5 फरवरी गुरुवार- संकष्टी चतुर्थी
- 13 फरवरी शुक्रवार- विजया एकादशी
- 15 फरवरी रविवार- महाशिव रात्रि
- 17 फरवरी मंगलवार- फाल्गुन अमावस्या
- 24 फरवरी मंगलवार होलाष्टक प्रारंभ
- 27 फरवरी शुक्रवार- आमलकी एकादशी





शिव हैं परम चेतना, सृजन-संरक्षण-संहार और मोक्ष का दिव्य स्वरूप

भारतीय दर्शन में भगवान शिव केवल एक देवता नहीं, बल्कि सम्पूर्ण ब्रह्मांड की चेतना और परमसत्य के प्रतीक हैं। शिव वह शक्ति हैं जो सृष्टि के सृजन, संरक्षण और संहार के दिव्य चक्र को संचालित करती है। वे जीवन और मृत्यु से परे, निराकार और अनंत चेतना का रूप हैं। शिव का नाम लेते ही मन में शांति, वैराग्य और आध्यात्मिक ऊर्जा का अनुभव होता है।

सृष्टि का दिव्य चक्र: शिव सृजन, संरक्षण और संहार—तीनों के संतुलन का प्रतीक हैं। यह विनाश नकारात्मक नहीं, बल्कि नवसृजन का मार्ग है। शिव के तांडव में भी सृजन का बीज छिपा है। सम्पूर्ण ब्रह्मांड शिव से उत्पन्न होता है, उन्हीं में स्थित रहता है और अंततः उन्हीं में विलीन हो जाता है।

परम चेतना और आत्मा: शिव को परम चेतन कहा गया है, क्योंकि वे हर जीव की आत्मा में विद्यमान हैं। वे निराकार हैं, फिर भी हर रूप में उपस्थित हैं। शिव का अर्थ है—"जो कल्याणकारी हो।" वे जीवन और मृत्यु के भय से मुक्त करते हैं और आत्मा को उसके वास्तविक स्वरूप का बोध कराते हैं।

योग का महत्व: भगवान शिव को "आदियोगी" कहा जाता है, अर्थात योगियों के प्रथम गुरु। उन्होंने योग के माध्यम से मनुष्य को आत्म-साक्षात्कार का मार्ग दिखाया। योग केवल शरीर का अभ्यास नहीं, बल्कि मन, आत्मा और चेतना को जोड़ने का साधन है। शिव का योग हमें भीतर की शक्ति पहचानने और जीवन में संतुलन लाने की प्रेरणा देता है।

भक्तों के लिए शिव: भक्तों के लिए शिव पिता, गुरु, मित्र और रक्षक हैं। वे अपने भक्तों को शक्ति, साहस और दुःखों से उबरने की क्षमता प्रदान करते हैं। शिव सरल हैं, इसलिए उन्हें "भोलेनाथ" कहा जाता है।

महाशिवरात्रि का महत्व: महाशिवरात्रि शिव और शक्ति के महामिलन का पर्व है। यह केवल एक त्योहार नहीं, बल्कि आत्मचिंतन और जागरूकता का अवसर है। इस पर्व का वास्तविक अर्थ तभी पूर्ण होता है, जब हम अपने जीवन में चेतना, संयम और सत्य का व्यावहारिक बोध अपनाएं।

निष्कर्ष: अंततः कहा जा सकता है कि शिव केवल एक देवता नहीं, बल्कि सम्पूर्ण ब्रह्मांड, चेतना और परमसत्य का प्रतिनिधित्व करते हैं। वे हमें सिखाते हैं कि विनाश से भयभीत न हों, क्योंकि वही नवसृजन का मार्ग है। शिव का स्मरण हमें आंतरिक शांति, आत्म-ज्ञान और मोक्ष की ओर ले जाता है।

आध्यात्मिक सत्संग-भजन कार्यक्रम के वीडियो **YouTube** पर उपलब्ध हैं। **YouTube** पर **HANSLOKTV** चैनल को अवश्य सब्सक्राइब करें और श्री भोले जी महाराज व माता श्री मंगला जी तथा संत-महात्माओं के सत्संग-भजन से आत्मलाभ प्राप्त करें।